अध्याय ७

श्री चैतन्य महाप्रभु एवं वल्लभ भट्ट की भेंट

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने अपने *अमृत-प्रवाह-भाष्य* में अध्याय सात का सारांश इस प्रकार से दिया है : इस अध्याय में श्री चैतन्य महाप्रभु से वल्लभ भट्ट की भेंट का वर्णन हुआ है। इन दोनों महापुरुषों के बीच कुछ हास-परिहास हुआ। अन्त में श्री चैतन्य महाप्रभु ने वल्लभ भट्ट को सुधारा और कृपा करके उनका निमन्त्रण स्वीकार किया। इसके पूर्व, श्री चैतन्य महाप्रभु ने देखा था कि वल्लभ भट्ट गदाधर पण्डित से अत्यधिक अनुरक्त हैं। इसलिए उन्होंने गदाधर पण्डित से रुष्ट होने का अभिनय किया। बाद में जब वल्लभ भट्ट की महाप्रभु से घनिष्ठता हो गई, तो महाप्रभु ने उन्हें गदाधर पण्डित से उपदेश लेने के लिए कहा। इस तरह महाप्रभु ने गदाधर पण्डित के प्रति अपने प्रेम भाव को व्यक्त किया।

चैतन्य-चरणाम्भोज-मकरन्द-लिहो भजे ।
येषां प्रसाद-मात्रेण पामरोऽप्यमरो भवेत् ॥ १ ॥

चैतन्य-चरणाम्भोज-मकरन्द-लिहो भजे ।
येषां प्रसाद-मात्रेण पामरोऽप्यमरो भवेत् ॥ १ ॥

चैतन्य—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **चरण-अम्भोज**—चरणकमलों के; **मकरन्द**—शहद को; **लिहः**—जो चखने (चाटने) में रत हैं; **भजे**—मैं वन्दना करता हूँ; **येषाम्**—जिनकी; **प्रसाद-मात्रेण**—कृपा मात्र द्वारा; **पामरः**—एक पतित जीव; **अपि**—भी; **अमरः**—मुक्त; **भवेत्**—हो जाता है।

अनुवाद

मैं श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तों को सादर नमस्कार करता हूँ। महाप्रभु

के चरणकमलों से मधु को चाटने में लगे भक्तों की अहैतुकी कृपा से ही एक पतितात्मा तक सदा के लिए मुक्त हो जाता है।

जय जय श्री-चैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥२॥

जय जय श्री-चैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ २ ॥

जय जय—जय हो; **श्री-चैतन्य**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **जय**—जय हो; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु की; **जय**—जय हो; **अद्वैत-चन्द्र**—अद्वैत आचार्य की; **जय**—जय हो; **गौर-भक्त-वृन्द**—श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तगणों की।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु की जय हो! श्री नित्यानन्द प्रभु की जय हो! श्री अद्वैतचन्द्र की जय हो! और श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे भक्तों की जय हो!

वर्षान्तरे यत गौड़ेर भक्त-गण आइला ।
पूर्ववत्महाप्रभु सबारे मिलिला ॥३॥

वर्षान्तरे यत गौड़ेर भक्त-गण आइला ।
पूर्ववत् महाप्रभु सबारे मिलिला ॥ ३ ॥

वर्ष-अन्तरे—अगले वर्ष; **यत**—सभी; **गौड़ेर**—बंगाल के; **भक्त-गण**—भक्त; **आइला**—आये; **पूर्व-वत्**—पहले की तरह; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **सबारे मिलिला**—उन सबसे मिले।

अनुवाद

अगले वर्ष बंगाल के सारे भक्त श्री चैतन्य महाप्रभु से भेंट करने गये और महाप्रभु पहले की ही तरह उन सबसे मिले।

एइ-मत विलास प्रभुर भक्त-गण लञा ।
हेन-काले वल्लभ-भट्ट मिलिल आसिया ॥४॥

एइ-मत विलास प्रभुर भक्त-गण लञा ।
हेन-काले वल्लभ-भट्ट मिलिल आसिया ॥ ४॥

एइ-मत—इस प्रकार; **विलास**—लीलाएँ; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **भक्त-गण लञा**—अपने भक्तों के साथ; **हेन-काले**—इस समय; **वल्लभ-भट्ट**—वल्लभ भट्ट नामक महान् विद्वान; **मिलिल**—मिले; **आसिया**—आकर।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु अपने भक्तों के साथ अपनी लीलाएँ करते रहे। तब एक विद्वान पण्डित, जिनका नाम वल्लभ भट्ट था, महाप्रभु से मिलने जगन्नाथपुरी गये।

तात्पर्य

वल्लभ भट्ट के वर्णन हेतु *मध्यलीला* के अध्याय १९ के श्लोक ६१ को देखें।

আসিয়া বন্দিল ভট্ট প্রভুর চরণে ।
প্রভু 'ভাগবত-বুদ্ধ্যে' কৈলা আলিঙ্গনে ॥ ৫॥
आसिया वन्दिल भट्ट प्रभुर चरणे ।
प्रभु 'भागवत-बुद्ध्ये' कैला आलिङ्गने ॥ ५॥

आसिया—आकर; **वन्दिल**—वन्दना की; **भट्ट**—वल्लभ भट्ट ने; **प्रभुर चरणे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **भागवत-बुद्ध्ये**—उन्हें एक महान् भक्त मानकर; **कैला आलिङ्गने**—आलिंगन किया।

अनुवाद

जब वल्लभ भट्ट आये, तो उन्होंने महाप्रभु के चरणकमलों में नमस्कार किया। महाप्रभु ने उन्हें महान् भक्त के रूप में स्वीकार करते हुए उनका आलिंगन किया।

মান্য করি' প্রভু তারে নিকটে বসাইলা ।
বিনয় করিয়া ভট্ট কহিতে লাগিলা ॥ ৬॥
मान्य करि' प्रभु तारे निकटे वसाइला ।
विनय करिया भट्ट कहिते लागिला ॥ ६॥

मान्य करि'—अत्यन्त सम्मानपूर्वक; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **तारे**—उन्हें; **निकटे**—पास; **वसाइला**—बैठाया, बिठाया; **विनय करिया**—अत्यन्त विनम्रतापूर्वक; **भट्ट**—वल्लभ भट्ट; **कहिते लागिला**—कहने लगे।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने वल्लभ भट्ट को अत्यन्त सम्मानपूर्वक अपने निकट बैठाया। तब वल्लभ भट्ट अत्यन्त विनयपूर्वक कहने लगे।

''बहु-दिन मनोरथ तोमा' देखिवारे ।
जगन्नाथ पूर्ण कैला, देखिलुँ तोमारे ॥७॥

"बहु-दिन मनोरथ तोमा' देखिबारे ।
जगन्नाथ पूर्ण कैला, देखिलुँ तोमारे ॥७॥

बहु-दिन—बहुत समय से; **मनोरथ**—मेरी इच्छा; **तोमा' देखिबारे**—आपके दर्शन करने की; **जगन्नाथ**—भगवान् जगन्नाथ ने; **पूर्ण कैला**—पूर्ण कर दी; **देखिलुँ तोमारे**—मैंने आपके दर्शन प्राप्त किये हैं।

अनुवाद

"हे प्रभु, मैं बहुत समय से आपका दर्शन करना चाह रहा था। अब भगवान् जगन्नाथ ने मेरी यह इच्छा पूरी की है, इसलिए मैं आपका दर्शन कर रहा हूँ।

तोमार दर्शन ये पाय सेई भाग्यवान् ।
तोमाके देखिये,—येन साक्षात्भगवान् ॥८॥

तोमार दर्शन ग्रे पाय सेइ भाग्यवान् ।
तोमाके देखिये,—ग्रेन साक्षात्भगवान् ॥८॥

तोमार दर्शन—आपके दर्शन; **ग्रे पाय**—जो प्राप्त करता है; **सेइ**—वह; **भाग्यवान्**—बहुत भाग्यशाली; **तोमाके देखिये**—मैं आपको देख रहा हूँ; **ग्रेन**—समान; **साक्षात् भगवान्**—साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्।

अनुवाद

"जो आपका दर्शन पाता है, वह सचमुच भाग्यशाली है, क्योंकि आप साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं।

তোমারে যে স্মরণ করে, সে হয় পবিত্র ।
দর্শনে পবিত্র হবে,—ইথে কি বিচিত্র? ॥৯॥

তোমারে যে স্মরণ করে, সে হয় পবিত্র ।
দর্শনে পবিত্র হবে,—ইথে কি বিচিত্র? ॥ ९ ॥

তোমারে—आपको; **যে**—जो कोई भी; **স্মরণ করে**—याद करता है; **সে**—वह; **হয়**—हो जाता है; **পবিত্র**—शुद्ध; **দর্শনে**—देखने मात्र से; **পবিত্র**—शुद्ध; **হবে**—हो जायेगा; **ইথে**—इसमें; **কি বিচিত্র**—क्या आश्चर्य है।

अनुवाद

"चूँकि जो कोई आपका स्मरण करता है, वह पवित्र हो जाता है, इसलिए इसमें कौन सा आश्चर्य है कि आपका दर्शन करने पर कोई पवित्र हो जाये?

যেষাং সংস্মরণাজ্জুংসাং সদ্যঃ শুধ্যন্তি বৈ গৃহাঃ ।
কিং পুনর্দর্শন-স্পর্শ-পাদ-শৌচাসনাদিভিঃ ॥১০॥

যেষাং সংস্মরণাত্পুংসাং সদ্যঃ শুধ্যন্তি বৈ গৃহাঃ ।
কিং পুনর্দর্শন-স্পর্শ-পাদ-শৌচাসনাদিভিঃ ॥ १० ॥

যেষাম্—जिनके; **সংস্মরণাত্**—स्मरण द्वारा; **পুংসাম্**—लोगों के; **সদ্যঃ**—तुरन्त; **শুধ্যন্তি**—शुद्ध हो जाते हैं; **বৈ**—निश्चित रूप से; **গৃহাঃ**—घर; **কিম্ পুনঃ**—क्या कहना; **দর্শন**—दर्शन द्वारा; **স্পর্শ**—स्पर्श; **পাদ-শৌচ**—चरणों को धोकर; **আসন-আদিভিঃ**—एक आसन अर्पित करना।

अनुवाद

"'महापुरुषों का स्मरण करने मात्र से सारा घर पवित्र हो जाता है, तो फिर उनका प्रत्यक्ष दर्शन करने, उनके चरणकमलों का स्पर्श करने, उनका पाद-प्रक्षालन करने या उन्हें आसन देने के विषय में क्या कहा जा सकता है।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (१.१९.३३) से है।

কলি-কালের ধর্ম—কৃষ্ণ-নাম-সঙ্কীর্তন ।
কৃষ্ণ-শক্তি বিনা নহে তার প্রবর্তন ॥১১॥

कलि-कालेर धर्म—कृष्ण-नाम-सङ्कीर्तन ।
कृष्ण-शक्ति विना नहे तार प्रवर्तन ॥ ११ ॥

कलि-कालेर—इस कलियुग का; **धर्म**—धर्म; **कृष्ण-नाम-सङ्कीर्तन**—भगवान् कृष्ण के पवित्र नाम का संकीर्तन; **कृष्ण-शक्ति विना**—भगवान् कृष्ण द्वारा शक्ति प्राप्त किये बिना; **नहे**—नहीं होता; **तार**—उसका; **प्रवर्तन**—प्रचार।

अनुवाद

"कलियुग में मूलभूत धार्मिक प्रणाली कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन करने की है। कृष्ण द्वारा शक्ति प्राप्त किये बिना संकीर्तन आन्दोलन का प्रसार कोई नहीं कर सकता।

তাহা প্রবর্তাইলা তুমি,—এই ত 'প্রমাণ' ।
কৃষ্ণ-শক্তি ধর তুমি,—ইথে নাহি আন ॥ ১২ ॥
তাহা প্রবর্তাইলা তুমি,—এই ত 'প্রমাণ' ।
কৃষ্ণ-শক্তি ধর তুমি,—ইথে নাহি আন ॥ ১২ ॥

তাহা—वह; **প্রবর্তাইলা**—प्रचार किया है; **তুমি**—आपने; **এই**—यह; **ত**—निश्चित रूप से; **প্রমাণ**—प्रमाण; **কৃষ্ণ-শক্তি**—कृष्ण की शक्ति; **ধর**—धारण करते हो; **তুমি**—आप; **ইথে নাহি আন**—इसमें कोई सन्देह नहीं है।

अनुवाद

"आपने कृष्णभावनामृत आन्दोलन को प्रसारित किया है। इसलिए यह स्पष्ट है कि आप कृष्ण द्वारा शक्ति प्राप्त हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

तात्पर्य

श्री मध्वाचार्य ने *नारायण संहिता* के निम्नलिखित उद्धरण की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है :

द्वापरीयैर्जनैर्विष्णुः पञ्चरात्रैस्तु केवलैः ।
कलौ तु नाममात्रेण पूज्यते भगवान् हरिः ॥

"द्वापर युग में पंचरात्रिकी विधि से पूजा करके कृष्ण या विष्णु को तुष्ट किया जा सकता है, किन्तु कलियुग में केवल भगवान् के नाम कीर्तन द्वारा पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हरि को तुष्ट किया और पूजा जा सकता है।" श्रील

भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर बतलाते हैं कि कृष्ण की अहैतुकी कृपा से आविष्ट हुए बिना कोई *जगद्गुरु* नहीं बन सकता। केवल मानसिक-कल्पना से कोई आचार्य नहीं बन सकता। वास्तविक आचार्य विश्वभर में भगवान् के पवित्र नाम का प्रचार करके हर एक को कृष्ण की भेंट देता है। इस तरह नाम कीर्तन करके शुद्ध होकर बद्धजीव संसार की प्रज्ज्वलित अग्नि से बच जाते हैं। इस तरह का आध्यात्मिक लाभ आकाश में चन्द्रमा के समान वर्धित होकर पूर्ण होता है। वास्तविक आचार्य को कृष्ण-कृपा का अवतार मानना चाहिए। निस्सन्देह, वह स्वयं कृष्ण का आलिंगन किये रहता है। इसलिए वह सभी *वर्णों* (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र) तथा सभी *आश्रमों* (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास) का गुरु होता है। चूँकि वह सबसे बड़ा भक्त माना जाना चाहिए, इसलिए वह *परमहंस ठाकुर कहलाता है। 'ठाकुर'* उपाधि परमहंस को प्रदान की जाती है। इसलिए जो आचार्य की भूमिका निभाता है अर्थात् कृष्ण के नाम तथा यश का विस्तार करके कृष्ण को सीधे प्रस्तुत करता है, वह *परमहंस* ठाकुर भी कहलाता है।

जगते करिला तुमि कृष्ण-नाम प्रकाशे ।
येई तोमा देखे, सेई कृष्ण-प्रेमे भासे ॥ १३॥

जगते करिला तुमि कृष्ण-नाम प्रकाशे ।
येइ तोमा देखे, सेइ कृष्ण-प्रेमे भासे ॥ १३॥

जगते—सम्पूर्ण विश्व में; **करिला**—किया है; **तुमि**—आपने; **कृष्ण-नाम प्रकाशे**—भगवान् कृष्ण के पवित्र नाम का प्राकट्य; **येइ**—जो कोई भी; **तोमा देखे**—आपको देखता है; **सेइ**—वह; **कृष्ण-प्रेमे**—कृष्ण-प्रेम में; **भासे**—डूब जाता है।

अनुवाद

"आपने सारे जगत् में कृष्ण नाम को उजागर किया है। जो भी आपको देखता है, वह तुरन्त कृष्ण-प्रेम में निमग्न हो जाता है।

प्रेम-परकाश नहे कृष्ण-शक्ति विने ।
'कृष्ण'—एक प्रेम-दाता, शास्त्र-प्रमाणे ॥ १४॥

प्रेम-परकाश नहे कृष्ण-शक्ति विने ।
'कृष्ण'—एक प्रेम-दाता, शास्त्र-प्रमाणे ॥ १४॥

प्रेम—कृष्ण-प्रेम भाव का; **परकाश**—प्राकट्य; **नहे**—नहीं हो सकता; **कृष्ण-शक्ति विने**—कृष्ण की शक्ति के बिना; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **एक**—एक मात्र; **प्रेम-दाता**—प्रेम देने वाले; **शास्त्र-प्रमाणे**—सभी प्रामाणिक शास्त्रों का निष्कर्ष।

अनुवाद

"कृष्ण द्वारा विशेष शक्ति प्राप्त किये बिना कोई कृष्ण-प्रेम उजागर नहीं कर सकता, क्योंकि कृष्ण ही परमानन्द प्रेम के एकमात्र दाता हैं। यही सारे प्रामाणिक शास्त्रों का निर्णय है।

सन्त्ववतारा बहवः
पुष्कर-नाभस्य सर्वतो-भद्राः ।
कृष्णादन्यः को वा
लतास्वपि प्रेम-दो भवति'' ॥१५॥

सन्त्ववतारा बहवः
पुष्कर-नाभस्य सर्वतो-भद्राः ।
कृष्णादन्यः को वा
लतास्वपि प्रेम-दो भवति" ॥ १५॥

सन्तु—होने दो; **अवतारा:**—अवतार; **बहवः**—अनेक; **पुष्कर-नाभस्य**—जिनकी नाभि से एक कमल खिलता है; **सर्वतः भद्राः**—पूर्णतया शुभ; **कृष्णात्**—भगवान् कृष्ण की अपेक्षा; **अन्यः**—अन्य; **कः वा**—कौन (सा); **लतासु**—शरणागत जीवों को; **अपि**—भी; **प्रेम-दः**—प्रेम देनेवाला; **भवति**—है।

अनुवाद

"'भगवान् के कई सर्वमंगलकारी अवतार हो सकते हैं, किन्तु भगवान् कृष्ण के अतिरिक्त ऐसा कौन है, जो शरणागतों को भगवत्प्रेम प्रदान कर सके?'"

तात्पर्य

यह श्लोक बिल्वमंगल ठाकुर कृत है। यह श्री रूप गोस्वामी द्वारा अपने *लघु भागवतामृत* (१.५.३७) में लिया गया है।

महाप्रभु कहे—"शुन, भट्ट महा-मति ।
मायावादी सन्न्यासी आमि, ना जानि कृष्ण-भक्ति ॥ १६ ॥

महाप्रभु कहे—"शुन, भट्ट महा-मति ।
मायावादी सन्न्यासी आमि, ना जानि कृष्ण-भक्ति ॥ १६ ॥

महाप्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया; **शुन**—कृपया सुनो; **भट्ट**—मेरे प्रिय वल्लभ भट्ट; **महा-मति**—विद्वान पण्डित; **मायावादी**—मायावादी; **सन्न्यासी**—संन्यासी; **आमि**—हूँ; **ना जानि**—मैं नहीं जानता; **कृष्ण-भक्ति**—कृष्ण भक्ति।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "हे प्रिय वल्लभ भट्ट, आप विद्वान पण्डित हो। कृपया मेरी बात सुनो। मैं तो मायावादी संन्यासी हूँ। इसलिए कृष्णभक्ति जानने का मेरे पास कोई अवसर नहीं है।

अद्वैताचार्य-गोसाञि—'साक्षातीश्वर' ।
ताँर सङ्गे आमार मन हइल निर्मल ॥ १७ ॥

अद्वैताचार्य-गोसाञि—'**साक्षातीश्वर**' ।
ताँर सङ्गे आमार मन हइल निर्मल ॥ १७ ॥

अद्वैत-आचार्य-गोसाञि—अद्वैत आचार्य; **साक्षात् ईश्वर**—साक्षात् भगवान्; **ताँर सङ्गे**—उनके संग के कारण; **आमार**—मेरा; **मन**—मन; **हइल**—हो गया है; **निर्मल**—शुद्ध।

अनुवाद

"फिर भी मेरा मन शुद्ध हो गया है, क्योंकि मैंने अद्वैत आचार्य की संगति की है, जो कि साक्षात् भगवान् हैं।

सर्व-शास्त्रे कृष्ण-भक्त्ये नाहि याँर सम ।
अतएव 'अद्वैत-आचार्य' ताँर नाम ॥ १८ ॥

सर्व-शास्त्रे कृष्ण-भक्त्ये नाहि याँर सम ।
अतएव 'अद्वैत-आचार्य' ताँर नाम ॥ १८ ॥

सर्व-शास्त्रे—सभी प्रामाणिक शास्त्रों में; **कृष्ण-भक्त्ये**—भगवान् कृष्ण की प्रेममयी सेवा में; **नाहि**—नहीं है; **याँर**—जिनके; **सम**—समान; **अतएव**—अतः; **अद्वैत**—जिसका कोई प्रतिद्वन्द्वी न हो; **आचार्य**—आचार्य; **ताँर नाम**—उनका नाम।

अनुवाद

"उनका समस्त प्रामाणिक शास्त्रों का ज्ञान तथा उनकी भगवान् कृष्ण की भक्ति अद्वितीय है। इसीलिए वे अद्वैत आचार्य कहलाते हैं।

যাঁহার কৃপাতে ম্লেচ্ছের হয় কৃষ্ণ-ভক্তি ।
কে কহিতে পারে তাঁর বৈষ্ণবতা-শক্তি? ॥১৯॥

য়াঁহার কৃপাতে ম্লেচ্ছের হয় কৃষ্ণ-ভক্তি ।
কে কহিতে পারে তাঁর বৈষ্ণবতা-শক্তি? ॥ ১৯॥

য়াঁহার—जिनकी; **कृपाते**—कृपा द्वारा; **म्लेच्छेर**—म्लेच्छों की; **हय**—हो जाती है; **कृष्ण-भक्ति**—कृष्ण के प्रति सेवा भावना; **के**—कौन; **कहिते पारे**—वर्णन कर सकता है; **ताँर**—उनकी; **वैष्णवता-शक्ति**—वैष्णवता की शक्ति।

अनुवाद

"वे इतने महान् पुरुष हैं कि अपनी कृपा से मांसाहारियों (म्लेच्छों) तक को कृष्ण भक्ति दिला सकते हैं। इसलिए उनकी वैष्णवता की शक्ति का अनुमान कौन लगा सकता है?

तात्पर्य

म्लेच्छ या मांसाहारी को कृष्ण भक्त बना पाना अत्यधिक कठिन है। इसलिए जो ऐसा कर सके, वह वैष्णवता के सर्वोच्च पद पर स्थित होता है।

নিত্যানন্দ-অবধূত—'সাক্ষাতীশ্বর' ।
ভাবোন্মাদে মত্ত কৃষ্ণ-প্রেমের সাগর ॥২০॥

নিত্যানন্দ-অবধূত—'সাক্ষাতীশ্বর' ।
ভাবোন্মাদে মত্ত কৃষ্ণ-প্রেমের সাগর ॥ ২০॥

নিত্যানন্দ—नित्यानन्द प्रभु; **অবধূত**—परमहंस; **সাক্ষাত্ ঈশ্বর**—साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **ভাব-উন্মাদে**—प्रेमभाव के उन्माद में; **মত্ত**—उन्मत्त; **কৃষ্ণ-প্রেমের**—कृष्ण के प्रेम का; **সাগর**—समुद्र।

अनुवाद

"नित्यानन्द प्रभु अवधूत भी साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं। वे

प्रेमावेश के उन्माद में सदैव उन्मत्त रहते हैं। निस्सन्देह, वे कृष्ण-प्रेम के सागर हैं।

षड्-दर्शन-वेत्ता भट्टाचार्य-सार्वभौम ।
षड्-दर्शने जगदगुरु भागवतोत्तम ॥२१॥

षड्-दर्शन-वेत्ता भट्टाचार्य्य-सार्वभौम ।
षड्-दर्शने जगद्गुरु भागवतोत्तम ॥ २१ ॥

षट्-दर्शन—छः दर्शनों के; **वेत्ता**—ज्ञाता; **भट्टाचार्य्य-सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **षट्-दर्शने**—छः दर्शनों में; **जगत्-गुरु**—समस्त विश्व के शिक्षक; **भागवत-उत्तम**—भक्तों में सर्वश्रेष्ठ।

अनुवाद

"सार्वभौम भट्टाचार्य छः दार्शनिक मतों के पूर्ण ज्ञाता हैं। इसलिए वे दर्शन के छः मार्गों को सिखाने में जगद्गुरु हैं। वे भक्तों में सर्वश्रेष्ठ हैं।

तेँह देखाइला मोरे भक्ति-योग-पार ।
ताँर प्रसादे जानिलुँ 'कृष्ण-भक्ति-योग' सार ॥२२॥

तेंह देखाइला मोरे भक्ति-योग-पार ।
ताँर प्रसादे जानिलुँ 'कृष्ण-भक्ति-योग' सार ॥ २२ ॥

तेंह—उन्होंने; **देखाइला**—दिखाया है; **मोरे**—मुझे; **भक्ति-योग**—प्रेममयी सेवा; **पार**—सीमा; **ताँर प्रसादे**—उनकी कृपा से; **जानिलुँ**—मैं जान गया हूँ; **कृष्ण-भक्ति**—भगवान् कृष्ण की प्रेममयी सेवा; **योग**—योग पद्धति का; **सार**—सार।

अनुवाद

"सार्वभौम भट्टाचार्य ने मुझे भक्ति की सीमा दिखलाई है। एकमात्र उन्हीं की कृपा से मैं यह समझ सका हूँ कि कृष्ण की भक्ति ही समस्त योग का सार है।

रामानन्द-राय कृष्ण-रसेर 'निधान' ।
तेँह जानाइला——कृष्ण——स्वयं भगवान् ॥२३॥

रामानन्द-राय कृष्ण-रसेर 'निधान' ।
तेंह जानाइला——कृष्ण——स्वयं भगवान् ॥ २३ ॥

रामानन्द-राय—श्रील रामानन्द राय; **कृष्ण-रसेर**—कृष्ण की प्रेममयी सेवा के दिव्य रसों की; **निधान**—खान; **तेंह**—उन्होंने; **जानाइला**—मुझे उपदेश किया; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **स्वयम्**—स्वयं; **भगवान्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्।

अनुवाद

"श्रील रामानन्द राय कृष्ण भक्ति के दिव्य रस के आखरी ज्ञाता हैं। उन्होंने मुझे उपदेश दिया है कि कृष्ण ही पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं।

तातें प्रेम-भक्ति——'पुरुषार्थ-शिरोमणि' ।
राग-मार्गे प्रेम-भक्ति 'सर्वाधिक' जानि ॥ २४ ॥

ताते प्रेम-भक्ति——'पुरुषार्थ-शिरोमणि' ।
राग-मार्गे प्रेम-भक्ति 'सर्वाधिक' जानि ॥ २४ ॥

ताते—अत:; **प्रेम-भक्ति**—प्रेमभाव में भगवत् सेवा; **पुरुषार्थ**—मानव जीवन के सभी उद्देश्यों में; **शिरोमणि**—सर्वप्रधान; **राग-मार्गे**—रागानुग प्रेम के मार्ग पर; **प्रेम-भक्ति**—कृष्ण-प्रेम; **सर्व-अधिक**—सबसे बड़ा है; **जानि**—मैं समझा हूँ।

अनुवाद

"रामानन्द राय की कृपा से मैं समझ सका हूँ कि कृष्ण-प्रेम जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य है और कृष्ण का रागानुग प्रेम सर्वोच्च पूर्णता है।

तात्पर्य

पुरुषार्थ ("जीवन का लक्ष्य") सामान्यतया धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष का द्योतक है। किन्तु इन चार पुरुषार्थों से भी ऊपर है भगवत्प्रेम। यह *परम पुरुषार्थ* या *पुरुषार्थ-शिरोमणि* कहलाता है। भगवान् कृष्ण की पूजा साधन भक्ति द्वारा की जाती है, किन्तु भक्ति की सर्वोच्च पूर्णता भगवान् का रागानुग (स्वत: स्फूर्त) प्रेम है।

दास्य, सख्य, वात्सल्य, आर ये शृङ्गार ।
दास, सखा, गुरु, कान्ता,——'आश्रय' याहार ॥ २५ ॥

दास्य, सख्य, वात्सल्य, आर ग्रे शृङ्गार ।
दास, सखा, गुरु, कान्ता,—'आश्रय' ग्राहार ॥ २५॥

दास्य—दासता; **सख्य**—मित्रता; **वात्सल्य**—मातृ-पितृ भाव का प्रेम; **आर**—तथा; **ग्रे**—जो; **शृङ्गार**—माधुर्य प्रेम; **दास**—सेवक; **सखा**—मित्र; **गुरु**—वरिष्ठ; **कान्ता**—प्रेमी; **आश्रय**—आश्रय; **ग्राहार**—जिनके।

अनुवाद

"दास, मित्र, गुरुजन तथा प्रेमिका—ये दास्य, सख्य, वात्सल्य तथा शृंगार रसों के आश्रय हैं।

'ऐश्वर्य-ज्ञान-युक्त', 'केवल'-भाव आर ।
ऐश्वर्य-ज्ञाने ना पाइ ब्रजेन्द्र-कुमार ॥२६॥
'ऐश्वर्य-ज्ञान-युक्त', 'केवल'-भाव आर ।
ऐश्वर्य-ज्ञाने ना पाइ ब्रजेन्द्र-कुमार ॥ २६॥

ऐश्वर्य-ज्ञान-युक्त—ऐश्वर्य ज्ञान से युक्त; **केवल**—शुद्ध; **भाव**—भावना; **आर**—तथा; **ऐश्वर्य-ज्ञाने**—ऐश्वर्य के ज्ञान द्वारा; **ना पाइ**—प्राप्त नहीं हो सकता; **ब्रजेन्द्र-कुमार**—नन्द महाराज का पुत्र।

अनुवाद

"भाव के दो प्रकार हैं। भगवान् के पूर्ण ऐश्वर्यों के ज्ञान से युक्त भाव ऐश्वर्यज्ञान-युक्त कहलाता है। और शुद्ध निष्कलुष भाव केवल कहलाता है। महाराज नन्द के पुत्र कृष्ण के ऐश्वर्य मात्र के ज्ञान से उनके चरणकमलों की शरण प्राप्त नहीं की जा सकती।

तात्पर्य

देखें मध्य लीला १९.१९२।

नायं सुखापो भगवान्देहिनां गोपिका-सुतः ।
ज्ञानिनां चात्म-भूतानां यथा भक्ति-मतामिह ॥२७॥
नायं सुखापो भगवान्देहिनां गोपिका-सुतः ।
ज्ञानिनां चात्म-भूतानां यथा भक्ति-मतामिह ॥ २७॥

न—नहीं; **अयम्**—ये भगवान् श्रीकृष्ण; **सुख-आपः**—सरलता से उपलब्ध; **भगवान्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **देहिनाम्**—उन भौतिकतावादी लोगों के लिए, जिन्होंने देह को ही आत्मा मान लिया है; **गोपिका-सुतः**—माता यशोदा के पुत्र; **ज्ञानिनाम्**—मानसिक चिन्तन में रत लोगों को; **च**—तथा; **आत्म-भूतानाम्**—कठिन तपस्याओं में लगे हुए लोगों के लिए या निजी संगियों के लिए; **यथा**—जैसे; **भक्ति-मताम्**—जो लोग रागानुग प्रेममयी सेवा में रत हैं; **इह**—इस संसार में।

अनुवाद

"'माता यशोदा के पुत्र, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण उन भक्तों के लिए सुलभ हैं, जो रागानुगा भक्ति में लगे हैं, किन्तु जो लोग मानसिक चिन्तक (ज्ञानी) हैं, जो कठोर तपस्या द्वारा आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हैं या जो शरीर को आत्मा ही मानते हैं, उनके लिए भगवान् दुर्लभ हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.९.२१) का है।

'आत्म-भूत'-शब्दे कहे 'पारिषद-गण' ।
ऐश्वर्य-ज्ञाने लक्ष्मी ना पाइला व्रजेन्द्र-नन्दन ॥२८॥

'आत्म-भूत'-शब्दे कहे 'पारिषद-गण' ।
ऐश्वर्य्य-ज्ञाने लक्ष्मी ना पाइला व्रजेन्द्र-नन्दन ॥ २८ ॥

आत्म-भूत-शब्दे—आत्म-भूत शब्द का; **कहे**—अर्थ; **पारिषद-गण**—पार्षद, अन्तरंग संगी गण; **ऐश्वर्य्य-ज्ञाने**—ऐश्वर्य ज्ञान में; **लक्ष्मी**—सौभाग्य की देवी; **ना पाइला**—प्राप्त नहीं कर सकती; **व्रजेन्द्र-नन्दन**—नन्द महाराज के पुत्र, कृष्ण की शरण।

अनुवाद

"'आत्मभूत' शब्द का अर्थ 'निजी संगी' है। भगवान् के ऐश्वर्य ज्ञान द्वारा लक्ष्मीजी नन्द महाराज के पुत्र की शरण प्राप्त नहीं कर पाईं।

तात्पर्य

लक्ष्मीजी को कृष्ण के ऐश्वर्य का पूर्ण ज्ञान है, किन्तु ऐसे ज्ञान से वे कृष्ण का सान्निध्य प्राप्त नहीं कर सकीं। किन्तु वृन्दावन के भक्तों को कृष्ण का वास्तविक सान्निध्य प्राप्त है।

नायं श्रियोऽङ्ग उ नितान्त-रतेः प्रसादः
स्वर्योषितां नलिन-गन्ध-रुचां कुतोऽन्याः ।
रासोत्सवेऽस्य भुज-दण्ड-गृहीत-कण्ठ-
लब्धाशिषां य उदगाद्व्रज-सुन्दरीणाम् ॥२९॥

नायं श्रियोऽङ्ग उ नितान्त-रतेः प्रसादः
स्वर्योषितां नलिन-गन्ध-रुचां कुतोऽन्याः ।
रासोत्सवेऽस्य भुज-दण्ड-गृहीत-कण्ठ-
लब्धाशिषां य उदगाद्व्रज-सुन्दरीणाम् ॥ २९ ॥

न—नहीं; **अयम्**—यह; **श्रियः**—लक्ष्मी देवी का; **अङ्गे**—वक्ष पर; **उ**—हाय; **नितान्त-रतेः**—जो अत्यन्त निकट से सम्बन्धित है; **प्रसादः**—अनुग्रह; **स्वः**—देव लोकों की; **योषिताम्**—स्त्रियों का; **नलिन**—कमल पुष्प की; **गन्ध**—सुगन्ध युक्त; **रुचाम्**—तथा देह की कान्ति; **कुतः**—अति निकृष्ट; **अन्याः**—अन्य सभी; **रास-उत्सवे**—रास नृत्य के उत्सव में; **अस्य**—भगवान् श्रीकृष्ण की; **भुज-दण्ड**—भुजाओं द्वारा; **गृहीत**—आलिंगित; **कण्ठ**—उनके गले; **लब्ध-आशिषाम्**—जिन्होंने ऐसी कृपा प्राप्त की; **यः**—जो; **उदगात्**—प्रकट हुई; **व्रज-सुन्दरीणाम्**—व्रजभूमि की दिव्य कन्याओं, सुन्दर गोपियों का।

अनुवाद

"'जब भगवान् श्रीकृष्ण रास लीला में गोपियों के साथ नृत्य कर रहे थे, तब भगवान् की बाहें गोपियों की गर्दन का आलिंगन कर रही थीं। यह दिव्य कृपा न तो कभी लक्ष्मीजी को, न ही वैकुण्ठ में अन्य प्रेयसियों को प्राप्त हो पाई थी। यहाँ तक कि स्वर्ग लोक की सर्वोत्तम सुन्दरियों ने भी, जिनकी शारीरिक कान्ति तथा सुगन्ध कमल पुष्पों के समान होती है, कभी ऐसी कृपा की कल्पना नहीं की थी। तो फिर संसारी स्त्रियों के विषय में क्या कहा जाए, जो भौतिक अनुमान के अनुसार अत्यन्त सुन्दर कही जाती हैं?'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.४७.६०) से लिया गया है।

शुद्ध-भावे सखा करे स्कन्धे आरोहण ।
शुद्ध-भावे व्रजेश्वरी करेन बन्धन ॥३०॥

शुद्ध-भावे सखा करे स्कन्धे आरोहण ।
शुद्ध-भावे व्रजेश्वरी करेन बन्धन ॥ ३० ॥

शुद्ध-भावे—शुद्ध कृष्णभावना में; **सखा**—मित्र; **करे**—करता है; **स्कन्धे**—कन्धे पर; **आरोहण**—चढ़ना; **शुद्ध-भावे**—शुद्ध कृष्णभावना में; **व्रज-ईश्वरी**—व्रज की रानी, यशोदा; **करेन बन्धन**—बाँधती हैं।

अनुवाद

"शुद्ध कृष्ण चेतना में कृष्ण का मित्र कृष्ण के कन्धों पर चढ़ जाता है और माता यशोदा कृष्ण को बाँध देती हैं।

तात्पर्य

शुद्ध भाव भगवान् के ऐश्वर्यों के ज्ञान पर निर्भर नहीं रहता। ऐसे ऐश्वर्यों के बिना भी, शुद्ध भाव में स्थित भक्त, कृष्ण को मित्र या पुत्र की भाँति प्रेम करने के लिए प्रेरित रहता है।

'মোর সখা', 'মোর পুত্র', এই 'শুদ্ধ' মন ।
অতএব শুক-ব্যাস করে প্রশংসন ॥ ৩১ ॥

'मोर सखा', 'मोर पुत्र',—एइ 'शुद्ध' मन ।
अतएव शुक-व्यास करे प्रशंसन ॥ ३१ ॥

मोर सखा—मेरा मित्र; **मोर पुत्र**—मेरा पुत्र; **एइ**—यह; **शुद्ध**—शुद्ध; **मन**—भावना; **अतएव**—इसीलिए; **शुक-व्यास**—शुकदेव गोस्वामी तथा व्यासदेव; **करे प्रशंसन**—प्रशंसा करते हैं।

अनुवाद

"शुद्ध कृष्ण चेतना में भगवान् के ऐश्वर्यों के ज्ञान के बिना ही भक्त कृष्ण को अपना मित्र या पुत्र मानता है। इसलिए इस भक्ति भाव की प्रशंसा शुकदेव गोस्वामी तथा व्यासदेव जैसे महाजन भी करते हैं।

ইত্থং সতাং ব্রহ্ম-সুখানুভূত্যা
দাস্যং গতানাং পর-দৈবতেন ।
মায়াশ্রিতানাং নর-দারকেণ
সাকং বিজহ্রুঃ কৃত-পুণ্য-পুঞ্জাঃ ॥ ৩২ ॥

इत्थं सतां ब्रह्म-सुखानुभूत्या
दास्यं गतानां पर-दैवतेन ।
मायाश्रितानां नर-दारकेण
साकं विजह्रुः कृत-पुण्य-पुञ्जाः ॥ ३२ ॥

इत्थम्—इस प्रकार; **सताम्**—जो भगवान् के निराकार पहलू को चाहते हैं; **ब्रह्म**—निराकार ज्योति के; **सुख**—सुख द्वारा; **अनुभूत्या**—जिसने अनुभव किया है; **दास्यम्**—सेवक का भाव; **गतानाम्**—जिन्होंने स्वीकार किया है; **पर-दैवतेन**—जो परम आराध्य विग्रह हैं; **माया-आश्रितानाम्**—बहिरंगा शक्ति से प्रभावित सामान्य लोगों के लिए; **नर-दारकेण**—उनके (भगवान् के) साथ, जो इस भौतिक संसार के एक बालक की भाँति; **साकम्**—मित्रता; **विजह्रुः**—खेले; **कृत-पुण्य-पुञ्जाः**—जिन्होंने असंख्य पुण्य कार्य किये होंगे।

अनुवाद

"'जो लोग भगवान् की ब्रह्मज्योति की प्रशंसा करते हुए आत्म-साक्षात्कार में लगे हुए हैं तथा जो पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को स्वामी के रूप में स्वीकार करके भक्ति में लगे हुए हैं अथवा जो भगवान् को सामान्य पुरुष मानकर माया के पाश में बँधे हुए हैं, वे यह नहीं समझ सकते कि कुछ महापुरुष प्रचूर पुण्य कर्म संचित करके भगवान् के साथ मैत्री वश ग्वाल बालों के रूप में खेल रहे हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.१२.११) से लिया गया है।

त्रय्या चोपनिषद्भिश्च साङ्ख्य-योगैश्च सात्वतैः ।
उपगीयमान-माहात्म्यं हरिं सामन्यतात्मजम् ॥ ३३ ॥

त्रय्या चोपनिषद्भिश्च साङ्ख्य-योगैश्च सात्वतैः ।
उपगीयमान-माहात्म्यं हरिं सामन्यतात्मजम् ॥ ३३ ॥

त्रय्या—तीन वेदों के अनुयायी जो इन्द्र तथा अन्य देवताओं द्वारा किये जानेवाले यज्ञों के समान यज्ञ करते हैं; **च**—तथा; **उपनिषद्भिः**—वैदिक ज्ञान के सर्वश्रेष्ठ अंग, उपनिषदों के अनुयायियों द्वारा; **च**—तथा; **साङ्ख्य**—ब्रह्माण्ड का विश्लेषण करने वाले दार्शनिकों द्वारा; **योगैः**—योगियों द्वारा; **च**—और; **सात्वतैः**—पंचरात्र तथा अन्य वैदिक ग्रन्थों में वर्णित उपासना पद्धतियों का अभ्यास करने वाले भक्तों द्वारा; **उपगीयमान**—गाई जाती है; **माहात्म्यम्**—

जिनकी कीर्ति; **हरिम्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हरि को; **सा**—वे, माता यशोदा; **अमन्यत**—मानती रही; **आत्म-जम्**—अपना पुत्र, उनकी देह से जन्मा।

अनुवाद

"'जब माता यशोदा ने कृष्ण के मुख के भीतर समस्त ब्रह्माण्डों को देखा, तो वे कुछ समय के लिए निश्चय ही आश्चर्यचकित हो गईं। जिस प्रकार इन्द्र तथा अन्य देवी-देवताओं की पूजा होती है, उसी प्रकार तीन वेदों के अनुयायी यज्ञों द्वारा भगवान् की पूजा करते हैं। उपनिषदों के अध्ययन द्वारा उनकी महानता को समझने वाले सन्त निराकार ब्रह्म के रूप में उनकी उपासना करते हैं। ब्रह्माण्ड का वैश्लेषिक अध्ययन करने वाले महान् दार्शनिक पुरुष के रूप में उनकी उपासना करते हैं। महान् योगी सर्वव्यापी परमात्मा के रूप में तथा भक्त पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में उनकी उपासना करते हैं। फिर भी माता यशोदा भगवान् को अपना पुत्र ही समझतीं थीं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.८.४५) से लिया गया है।

नन्दः किमकरोद्ब्रह्मन्श्रेय एवं महोदयम् ।
यशोदा वा महा-भागा पपौ यस्याः स्तनं हरिः ॥ ३४॥

नन्दः किमकरोद्ब्रह्मन्श्रेय एवं महोदयम् ।
यशोदा वा महा-भागा पपौ यस्याः स्तनं हरिः ॥ ३४॥

नन्दः—नन्द महाराज ने; **किम्**—क्या; **अकरोत्**—किया था; **ब्रह्मन्**—हे ब्राह्मण; **श्रेयः**—शुभ कार्य; **एवम्**—जिस कारण से; **महा-उदयम्**—कृष्ण के पिता के रूप में इतने श्रेष्ठ पद तक उठ गये; **यशोदा**—माता यशोदा ने; **वा**—अथवा; **महा-भागा**—महा भाग्यवती; **पपौ**—पिए; **यस्याः**—जिनके; **स्तनम्**—स्तन; **हरिः**—परम भगवान् ने।

अनुवाद

"'हे ब्राह्मण, नन्द महाराज ने पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण को पुत्र रूप में पाने के लिए कौन सा पुण्य कर्म किया? तथा माता यशोदा ने कौन-सा पुण्यकर्म किया जिससे परम भगवान् कृष्ण ने उन्हें 'माता' कहकर पुकारा और उनके स्तनों का दूध पिया?'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.८.४६) से है।

ঐশ্বর্য দেখিলেহ 'শুদ্ধের' নহে ঐশ্বর্য জ্ঞান ।
অতএব ঐশ্বর্য হইতে 'কেবল'-ভাব প্রধান ॥৩৫॥

ऐश्वर्य्य देखिलेह 'शुद्धेर' नहे ऐश्वर्य्य ज्ञान ।
अतएव ऐश्वर्य्य हइते 'केवल'-भाव प्रधान ॥ ३५ ॥

ऐश्वर्य्य—ऐश्वर्य; **देखिलेह**—देखने के बाद भी; **शुद्धेर**—एक शुद्ध भक्त को; **नहे**—नहीं होता; **ऐश्वर्य्य-ज्ञान**—ऐश्वर्य का ज्ञान; **अतएव**—इसलिए; **ऐश्वर्य्य हइते**—ऐश्वर्य ज्ञान की अपेक्षा; **केवल-भाव**—शुद्ध भाव; **प्रधान**—अधिक प्रमुख।

अनुवाद

"यदि शुद्ध भक्त कृष्ण के ऐश्वर्य को देखता भी है, तो वह उसे स्वीकार नहीं करता। इसलिए शुद्ध चेतना (केवल भाव) भगवान् के ऐश्वर्य ज्ञान से अधिक श्रेष्ठ है।

এ সব শিখাইলা মোরে রায়-রামানন্দ ।
অনর্গল রস-বেত্তা প্রেম-সুখানন্দ ॥৩৬॥

ए सब शिखाइला मोरे राय-रामानन्द ।
अनर्गल रस-वेत्ता प्रेम-सुखानन्द ॥ ३६ ॥

ए सब—ये सभी; **शिखाइला**—उपदेश दिये; **मोरे**—मुझे; **राय-रामानन्द**—रामानन्द राय ने; **अनर्गल**—निरन्तर; **रस-वेत्ता**—जो दिव्य रसों को समझते हैं; **प्रेम-सुख-आनन्द**—कृष्ण के प्रेमभाव के आनन्द में तल्लीन।

अनुवाद

"रामानन्द राय दिव्य रसों से भलीभाँति अवगत हैं। वे कृष्ण-प्रेमावेश के सुख में निरन्तर तन्मय रहते हैं। उन्हीं ने मुझे यह सब सिखाया है।

কহন না যায় রামানন্দের প্রভাব ।
রায়-প্রসাদে জানিলুঁ ব্রজের 'শুদ্ধ' ভাব ॥৩৭॥

कहन ना ग्राय रामानन्देर प्रभाव ।
राय-प्रसादे जानिलुँ व्रजेर 'शुद्ध' भाव ॥ ३७॥

कहन ना ग्राय—वर्णन नहीं किया जा सकता; **रामानन्देर प्रभाव**—रामानन्द राय का प्रभाव; **राय**—रामानन्द राय की; **प्रसादे**—कृपा द्वारा; **जानिलुँ**—मैं समझ गया हूँ; **व्रजेर**—व्रजवासियों का; **शुद्ध भाव**—विशुद्ध प्रेम।

अनुवाद

"रामानन्द राय के प्रभाव तथा ज्ञान का वर्णन कर सकना असम्भव है, क्योंकि उन्हीं की कृपा से मैं वृन्दावनवासियों के शुद्ध प्रेम को समझ सका।

दामोदर-स्वरूप——'प्रेम-रस' मूर्तिमान् ।
याँर सङ्गे हैल व्रज-मधुर-रस-ज्ञान ॥ ३८॥
दामोदर-स्वरूप——'प्रेम-रस' मूर्तिमान् ।
ग्राँर सङ्गे हैल व्रज-मधुर-रस-ज्ञान ॥ ३८॥

दामोदर-स्वरूप—स्वरूप दामोदर गोस्वामी; **प्रेम-रस**—प्रेमभाव के दिव्य रसों के; **मूर्तिमान्**—मूर्त रूप; **ग्राँर सङ्गे**—जिनके संग द्वारा; **हैल**—हो गया; **व्रज**—व्रज के; **मधुर-रस**—माधुर्य प्रेम रस का; **ज्ञान**—ज्ञान।

अनुवाद

"प्रेमावेश का दिव्य रस स्वरूप दामोदर द्वारा मूर्तिमान होता है। उनकी संगति से मैंने वृन्दावन के दिव्य माधुर्य रस को समझा है।

'शुद्ध-प्रेम' व्रज-देवीर——काम-गन्ध-हीन
'कृष्ण-सुख-तात्पर्य',——एइ तार चिह्न ॥ ३९॥
'शुद्ध-प्रेम' व्रज-देवीर——काम-गन्ध-हीन
'कृष्ण-सुख-तात्पर्य्य',——एइ तार चिह्न ॥ ३९॥

शुद्ध-प्रेम—निर्मल प्रेम; **व्रज-देवीर**—गोपियों या श्रीमती राधारानी का; **काम-गन्ध-हीन**—भौतिक काम भाव की गन्ध से रहित; **कृष्ण**—कृष्ण की; **सुख**—प्रसन्नता; **तात्पर्य्य**—उद्देश्य; **एइ**—यही; **तार**—उसका; **चिह्न**—चिह्न।

अनुवाद

"गोपियों तथा श्रीमती राधारानी का शुद्ध प्रेम भौतिक कामवासना के लेशमात्र से रहित है। ऐसे दिव्य प्रेम की कसौटी यह है कि इसका एकमात्र उद्देश्य कृष्ण को तुष्ट करना है।

यत्ते सुजात-चरणाम्बुरुहं स्तनेषु
भीताः शनैः प्रिय दधीमहि कर्कशेषु ।
तेनाटवीमटसि तद्व्यथते न किं स्वित्
कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदायुषां नः ॥ ४० ॥

यत्ते सुजात-चरणाम्बुरुहं स्तनेषु
भीताः शनैः प्रिय दधीमहि कर्कशेषु ।
तेनाटवीमटसि तद्व्यथते न किं स्वित्
कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदायुषां नः ॥ ४० ॥

यत्—जो; **ते**—आपके; **सुजात**—अत्यन्त कोमल; **चरण-अम्बु-रुहम्**—चरणकमल; **स्तनेषु**—स्तनों पर; **भीताः**—भयभीत; **शनैः**—धीरे से; **प्रिय**—हे प्रिय; **दधीमहि**—हम रखती हैं; **कर्कशेषु**—कठोर; **तेन**—उनके द्वारा; **अटवीम्**—मार्ग; **अटसि**—आप चलते हैं; **तत्**—वे; **व्यथते**—पीड़ित हैं; **न**—नहीं; **किम् स्वित्**—हम आश्चर्य करती हैं; **कूर्प-आदिभिः**—छोटे कंकरों इत्यादि द्वारा; **भ्रमति**—विचलित होता है; **धीः**—मन; **भवत्-आयुषाम्**—उनका जिनके आप ही प्राण-धन हैं; **नः**—हमारे।

अनुवाद

"'हे प्रिय, आपके चरणकमल इतने कोमल हैं कि हम डरते-डरते उन्हें अपने वक्षस्थलों पर धीरे से रखती हैं कि कहीं आपके चरणों को चोट न लग जाए। हमारे प्राण केवल आप पर आश्रित हैं। इसलिए हमारे मन इस बात से चिन्तित हैं कि वनमार्ग में घूमते समय आपके चरण कहीं कंकरों से क्षत-विक्षत न हो जायें।'

तात्पर्य

यह श्लोक गोपियों द्वारा कहा गया है और *श्रीमद्भागवत* (१०.३१.१९) से है।

गोपी-गणेर शुद्ध-प्रेम ऐश्वर्य-ज्ञान-हीन ।
प्रेमेते भर्त्सना करे एइ तार चिह्न ॥ ४१ ॥

गोपी-गणेर शुद्ध-प्रेम ऐश्वर्य्य-ज्ञान-हीन ।
प्रेमेते भर्त्सना करे एइ तार चिह्न ॥ ४१ ॥

गोपी-गणेर—गोपियों का; **शुद्ध-प्रेम**—निर्मल प्रेम; **ऐश्वर्य्य-ज्ञान-हीन**—ऐश्वर्य की जानकारी से रहित; **प्रेमेते**—शुद्ध प्रेम में; **भर्त्सना**—डाँटना; **करे**—करती; **एइ**—यह; **तार**—उसी का; **चिह्न**—लक्षण।

अनुवाद

"ऐश्वर्य के ज्ञान से रहित शुद्ध प्रेम के वशीभूत गोपियाँ कभी-कभी कृष्ण की भर्त्सना करती हैं। यह शुद्ध प्रेम का लक्षण है।

पति-सुतान्वय-भ्रातृ-बान्धवान्
अतिविलङ्घ्य तेऽन्त्यच्युतागताः ।
गति-विदस्तवोद्गीत-मोहिताः
कितव योषितः कस्त्यजेन्निशि ॥ ४२ ॥

पति-सुतान्वय-भ्रातृ-बान्धवान्
अतिविलङ्घ्य तेऽन्त्यच्युतागताः ।
गति-विदस्तवोद्गीत-मोहिताः
कितव योषितः कस्त्यजेन्निशि ॥ ४२ ॥

पति—पतियों की; **सुत**—पुत्रों की; **अन्वय**—परिवार; **भ्रातृ**—भाइयों की; **बान्धवान्**—सम्बन्धियों की; **अतिविलङ्घ्य**—परवाह किये बिना; **ते**—आपकी; **अन्ति**—शरण में; **अच्युत**—हे अच्युत; **आगताः**—आयी हैं; **गति-विदः**—जो हमारे सभी कार्यकलाप जानते हैं; **तव**—आपकी; **उद्गीत**—वंशी की ध्वनि द्वारा; **मोहिताः**—आकृष्ट होकर; **कितव**—हे महान छलिया; **योषितः**—सुन्दर स्त्रियों को; **कः**—कौन; **त्यजेत्**—त्यागेगा; **निशि**—आधी रात के समय।

अनुवाद

"'हे प्रिय कृष्ण, हम गोपियों ने अपने पतियों, पुत्रों, परिवार, भाइयों तथा मित्रों के आदेश की अवहेलना की है और आपके पास आने के लिए उनका संग छोड़ा है। आप हमारी इच्छाओं के विषय में सब कुछ जानते

हैं। हम आपकी वंशी के सर्वोत्कृष्ट संगीत से आकृष्ट होकर ही आई हैं। किन्तु आप बहुत बड़े शठ निकले, क्योंकि इस रात्रि में ऐसा कौन होगा, जो हम जैसी तरुणियों का साथ छोड़ देगा?'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.३१.१६) से लिया गया है।

सर्वोत्तम भजन एই সর্ব-ভক্তি জিনি' ।
অতএব কৃষ্ণ কহে,—'আমি তোমার ঋণী' ॥ ৪৩ ॥

सर्वोत्तम भजन एइ सर्व-भक्ति जिनि' ।
अतएव कृष्ण कहे,—'आमि तोमार ऋणी' ॥ ४३ ॥

सर्व-उत्तम—सबसे बढ़कर; **भजन**—प्रेममयी सेवा; **एइ**—यह; **सर्व-भक्ति**—सब प्रकार की भक्ति; **जिनि'**—जीतने वाली; **अतएव**—अतः; **कृष्ण कहे**—भगवान् कृष्ण कहते हैं; **आमि**—मैं; **तोमार**—तुम्हारा; **ऋणी**—ऋणी हूँ।

अनुवाद

"गोपियों का माधुर्य प्रेम सर्वोच्च भक्ति है, जो भक्ति की अन्य सारी विधियों को पार कर जाती है। इसलिए भगवान् कृष्ण को कहना पड़ा, 'हे गोपियों, मैं तुम लोगों का ऋण नहीं उतार सकता। निस्सन्देह, मैं तुम लोगों का सदैव ऋणी हूँ।'

न পারয়েঽহং নিরবদ্য-সংয়ুজাং
স্ব-সাধু-কৃত্যং বিবুধায়ুষাপি বঃ ।
যা মাভজন্দুর্জয়-গেহ-শৃঙ্খলাঃ
সংবৃশ্চ্য তদ্বঃ প্রতিয়াতু সাধুনা ॥ ৪৪ ॥

न पारयेঽहं निरवद्य-संयुजां
स्व-साधु-कृत्यं विबुधायुषापि वः ।
या माभजन्दुर्जय-गेह-शृङ्खलाः
संवृश्च्य तद्वः प्रतियातु साधुना ॥ ४४ ॥

न—नहीं; **पारये**—चुका सकता; **अहम्**—मैं; **निरवद्य-संयुजाम्**—जो कपट से पूर्णतया रहित हैं; **स्व-साधु-कृत्यम्**—यथोचित कीमत; **विबुध-आयुषा**—देवताओं के जीवन काल

तक भी; **अपि**—यद्यपि; **वः**—आपको; **याः**—जिन्होंने; **मा**—मेरी; **अभजन्**—सेवा की; **दुर्जय-गेह-शृङ्खलाः**—गृहस्थ जीवन के बन्धन जिन्हें पार करना अत्यन्त कठिन है; **संवृश्च्य**—काटकर; **तत्**—वह; **वः**—आपका; **प्रतियातु**—चुकता होने दो; **साधुना**—सुकृत्यों द्वारा ही।

अनुवाद

"'हे गोपियों, मैं तुम लोगों की निष्कलंक सेवा के ऋण को ब्रह्मा की आयु तक में भी नहीं चुका सकता। मुझसे तुम लोगों का यह सम्बन्ध निन्दा से परे है। तुम लोगों ने समस्त घरेलू सम्बन्धों को तोड़कर मेरी पूजा की है, जिन्हें तोड़ पाना कठिन होता है। इसलिए तुम्हारे यशस्वी कार्य ही तुम्हारा पुरस्कार बनें।"

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (१०.३२.२२) से है।

ঐশ্বর্য-জ্ঞান হৈতে কেবলা-ভাব——প্রধান ।
পৃথিবীতে ভক্ত নাহি উদ্ধব-সমান ॥ ৪৫ ॥

ঐশ্বর্য-জ্ঞান হৈতে কেবলা-ভাব——প্রধান ।
পৃথিবীতে ভক্ত নাহি উদ্ধব-সমান ॥ ৪৫ ॥

ऐश्वर्य-ज्ञान हैते—ऐश्वर्यमय दिव्य प्रेम की अपेक्षा; **केवला-भाव**—शुद्ध प्रेम; **प्रधान**—अधिक प्रमुख; **पृथिवीते**—संसार में; **भक्त नाहि**—कोई भक्त नहीं है; **उद्धव-समान**—उद्धव के समान।

अनुवाद

"शुद्ध कृष्ण-प्रेम ऐश्वर्य में कृष्ण-प्रेम से सर्वथा भिन्न होता है और सर्वोच्च पद पर होता है। इस पृथ्वी पर उद्धव से बढ़कर कोई भक्त नहीं है।

তেঁহ যাঁর পদ-ধূলি করেন প্রার্থন ।
স্বরূপের সঙ্গে পাইলুঁ এ সব শিক্ষণ ॥ ৪৬ ॥

তেঁহ যাঁর পদ-ধূলি করেন প্রার্থন ।
স্বরূপের সঙ্গে পাইলুঁ এ সব শিক্ষণ ॥ ৪৬ ॥

तेंह याँर पद-धूलि करेन प्रार्थन ।
स्वरूपेर सङ्गे पाइलुँ ए सब शिक्षण ॥ ४६ ॥

तेंह—वह; **याँर**—जिनके; **पद-धूलि**—चरणकमलों की धूल; **करेन प्रार्थन**—चाहते हैं; **स्वरूपेर सङ्गे**—स्वरूप दामोदर से; **पाइलुँ**—मैंने पाया है; **ए सब**—ये सब; **शिक्षण**—उपदेश।

अनुवाद

"उद्धव गोपियों के चरणकमलों की धूलि अपने सिर पर धारण करना चाहते हैं। मैंने स्वरूप दामोदर से भगवान् कृष्ण के इन सारे दिव्य प्रेम-व्यापारों के विषय में सीखा है।

आसामहो चरण-रेणु-जुषामहं स्यां
वृन्दावने किमपि गुल्म-लतौषधीनाम् ।
या दुस्त्यजं स्व-जनमार्य-पथं च हित्वा
भेजुर्मुकुन्द-पदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम् ॥ ४७॥

आसामहो चरण-रेणु-जुषामहं स्यां
वृन्दावने किमपि गुल्म-लतौषधीनाम् ।
या दुस्त्यजं स्व-जनमार्य-पथं च हित्वा
भेजुर्मुकुन्द-पदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम् ॥ ४७॥

आसाम्—गोपियों के; **अहो**—अरे; **चरण-रेणु**—चरणकमलों की धूल; **जुषाम्**—समर्पित; **अहम् स्याम्**—मैं बनूँ; **वृन्दावने**—वृन्दावन में; **किम् अपि**—कोई भी; **गुल्म-लता-औषधीनाम्**—झाड़ियों, लताओं या औषधियों में; **या**—जो; **दुस्त्यजम्**—छोड़ने में कठिन; **स्व-जनम्**—परिवार जन; **आर्य-पथम्**—पतिव्रता धर्म; **च**—तथा; **हित्वा**—छोड़कर; **भेजुः**—सेवा की; **मुकुन्द-पदवीम्**—मुकुन्द, कृष्ण के चरणकमल; **श्रुतिभिः**—वेदों द्वारा; **विमृग्याम्**—खोजने योग्य।

अनुवाद

"'वृन्दावन की गोपियों ने अपने पतियों, पुत्रों तथा अन्य पारिवारिक जनों का साथ छोड़ दिया है, जिन्हें छोड़ पाना अत्यन्त कठिन होता है और उन्होंने वैदिक ज्ञान से खोजे जाने वाले मुकुन्द के चरणकमलों की शरण ग्रहण करने के लिए सतीत्व का मार्ग त्याग दिया है। ओह, यदि मैं वृन्दावन की कोई झाड़ी, लता या औषधी बन जाऊँ, तो कितना भाग्यशाली हूँगा, क्योंकि तब गोपियाँ इन्हें अपने पाँव से रौदंती हुईं अपने चरणकमलों की धूल से आशीर्वाद देंगी।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.४७.६१) से है, जिसे उद्धव ने कहा है। जब कृष्ण ने उद्धव को वृन्दावन में गोपियों की दशा देखने के लिए भेजा, तब वे उनके साथ कुछ महीने रुके रहे और उनसे कृष्ण के विषय में लगातार बातें करते रहे। यद्यपि इससे गोपियाँ तथा वृन्दावन के अन्य निवासी अत्यन्त प्रसन्न थे, किन्तु उद्धव ने देखा कि गोपियाँ कृष्ण-विरह से अत्यन्त तीव्रता से ग्रस्त हैं। उनके हृदय इतने विचलित थे कि कभी-कभी उनके मन विक्षिप्त हो उठते थे। कृष्ण के प्रति गोपियों के शुद्ध प्रेम एवं उनकी अनन्य भक्ति को देखकर उद्धव की इच्छा हुई कि वे वृन्दावन की लता, घास की पत्ती या औषधी होते, तो गोपियाँ कभी न कभी उन पर चलतीं, जिससे उनके चरणों की धूल सिर पर धारण करने को मिल जाती।

हरिदास-ठाकुर——महा-भागवत-प्रधान ।
प्रति दिन लय तेँह तिन-लक्ष नाम ॥ ४८ ॥

हरिदास-ठाकुर——महा-भागवत-प्रधान ।
प्रति दिन लय तेंह तिन-लक्ष नाम ॥ ४८ ॥

हरिदास-ठाकुर—हरिदास ठाकुर; **महा-भागवत-प्रधान**—सभी शुद्ध भक्तों में सर्वश्रेष्ठ; **प्रति दिन**—रोज; **लय**—जप करते हैं; **तेंह**—वे; **तिन-लक्ष नाम**—३,००,००० भगवान् के पवित्र नाम।

अनुवाद

"नामाचार्य हरिदास ठाकुर समस्त शुद्ध भक्तों में से सर्वाधिक पूज्य हैं। वे प्रति दिन तीन लाख पवित्र नामों का जप करते हैं।

नामेर महिमा आमि ताँर ठाञि शिखिलुँ ।
ताँर प्रसादे नामेर महिमा जानिलुँ ॥ ४९ ॥

नामेर महिमा आमि ताँर ठाञि शिखिलुँ ।
ताँर प्रसादे नामेर महिमा जानिलुँ ॥ ४९ ॥

नामेर महिमा—पवित्र नाम की महिमा; **आमि**—मैंने; **ताँर ठाञि**—उनसे; **शिखिलुँ**—

जानी; **ताँर प्रसादे**—उनकी कृपा से; **नामेर**—पवित्र नाम की; **महिमा**—महिमा; **जानिलुँ**—मैं समझ सका।

अनुवाद

"मैंने तो भगवान् के पवित्र नाम की महिमा के विषय में हरिदास ठाकुर से सीखा है और उनकी कृपा से इस महिमा को जाना है।

आचार्यरत्न आचार्यनिधि पण्डित-गदाधर ।
जगदानन्द, दामोदर, शङ्कर, वक्रेश्वर ॥५०॥
काशीश्वर, मुकुन्द, वासुदेव, मुरारि ।
आर यत भक्त-गण गौड़े अवतरि' ॥५१॥
कृष्ण-नाम-प्रेम कैला जगते प्रचार ।
इँहा सबार सङ्गे कृष्ण-भक्ति ये आमार'' ॥५२॥

आचार्यरत्न आचार्यनिधि पण्डित-गदाधर ।
जगदानन्द, दामोदर, शङ्कर, वक्रेश्वर ॥५०॥
काशीश्वर, मुकुन्द, वासुदेव, मुरारि ।
आर यत भक्त-गण गौड़े अवतरि' ॥५१॥
कृष्ण-नाम-प्रेम कैला जगते प्रचार ।
इँहा सबार सङ्गे कृष्ण-भक्ति ये आमार" ॥५२॥

आचार्यरत्न—आचार्यरत्न; **आचार्यनिधि**—आचार्यनिधि; **पण्डित-गदाधर**—गदाधर पण्डित; **जगदानन्द**—जगदानन्द; **दामोदर**—दामोदर; **शङ्कर**—शंकर; **वक्रेश्वर**—वक्रेश्वर; **काशीश्वर**—काशीश्वर; **मुकुन्द**—मुकुन्द; **वासुदेव**—वासुदेव; **मुरारि**—मुरारि; **आर**—तथा; **यत**—जितने भी; **भक्त-गण**—भक्तगण; **गौड़े**—बंगाल में; **अवतरि'**—अवतरित हुए; **कृष्ण-नाम**—भगवान् कृष्ण के पवित्र नाम के; **प्रेम**—दिव्य कृष्ण-प्रेम का; **कैला**—किया; **जगते**—समस्त संसार में; **प्रचार**—प्रचार; **इँहा सबार**—उन सबके; **सङ्गे**—संग द्वारा; **कृष्ण-भक्ति**—कृष्ण की प्रेममयी सेवा; **ये**—जो; **आमार**—मेरी।

अनुवाद

"आचार्यरत्न, आचार्यनिधि, गदाधर पण्डित, जगदानन्द, दामोदर, शंकर, वक्रेश्वर, काशीश्वर, मुकुन्द, वासुदेव, मुरारि तथा अन्य अनेक भक्तों ने कृष्ण के पवित्र नाम की महिमा तथा कृष्ण के प्रति प्रेम के

महत्त्व का जन-जन में प्रचार करने हेतु बंगाल में अवतार लिया है। मैंने इन्हीं से कृष्ण-भक्ति का अर्थ सीखा है।"

भट्टेर हृदये दृढ़ अभिमान जानि' ।
भङ्गी करि' महाप्रभु कहे एत वाणी ॥ ५३ ॥

भट्टेर हृदये दृढ़ अभिमान जानि' ।
भङ्गी करि' महाप्रभु कहे एत वाणी ॥ ५३ ॥

भट्टेर हृदये—वल्लभ भट्ट के हृदय में; **दृढ़**—दृढ़; **अभिमान**—गर्व; **जानि'**—जानकर; **भङ्गी करि'**—संकेत करके; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **कहे**—बोले; **एत वाणी**—ये वचन।

अनुवाद

यह जानते हुए कि वल्लभ भट्ट का हृदय गर्वित है, श्री चैतन्य महाप्रभु ने ये शब्द यह जताने के लिए कहे कि भक्ति के बारे में किस तरह सीखा जा सकता है।

तात्पर्य

वल्लभ भट्ट को अपने भक्ति विषयक ज्ञान पर अत्यधिक गर्व था, इसीलिए वे महाप्रभु को जाने बिना उनके विषय में बोलना चाह रहे थे। इसीलिए महाप्रभु ने कई प्रकार से इंगित किया कि यदि वल्लभ भट्ट वास्तव में जानना चाहते हैं कि भक्ति क्या है, तो उन्हें उन सारे भक्तों से सीखना होगा, जिनका उल्लेख उन्होंने किया, यथा अद्वैत आचार्य, भगवान् नित्यानन्द, सार्वभौम भट्टाचार्य, रामानन्द राय इत्यादि। जैसाकि स्वरूप दामोदर ने कहा है कि यदि कोई *श्रीमद्भागवत* का अर्थ जानना चाहता है, तो उसे किसी स्वरूपसिद्ध व्यक्ति से शिक्षा लेनी होगी। किसी को गर्वित होकर यह नहीं सोचना चाहिए कि पुस्तकें पढ़ने से ही वह भगवान् की दिव्य प्रेमाभक्ति को समझ सकता है। उसे किसी वैष्णव का दास बनना होगा। जैसाकि नरोत्तमदास ठाकुर ने पुष्टि की है—*छाड़िया वैष्णव-सेवा निस्तार पायेछे केबा*—शुद्ध वैष्णव की श्रद्धापूर्वक सेवा किये बिना दिव्य पद प्राप्त नहीं किया जा सकता। उसे वैष्णव गुरु का आश्रय स्वीकार करना चाहिए (*आदौ गुर्वाश्रयम्*) और तब प्रश्नोत्तरों द्वारा धीरे-धीरे

सीखना चाहिए कि कृष्ण की भक्ति क्या है। यही परम्परा प्रणाली कहलाती है।

''आमि से 'वैष्णव',——भक्ति-सिद्धान्त सब जानि ।
आमि से भागवत-अर्थ उत्तम बाखानि'' ॥५४॥

"आमि से 'वैष्णव',——भक्ति-सिद्धान्त सब जानि ।
आमि से भागवत-अर्थ उत्तम वाखानि" ॥५४॥

आमि—मैं हूँ; **से**—वह; **वैष्णव**—वैष्णव; **भक्ति-सिद्धान्त**—भक्ति के सिद्धान्त; **सब**—सभी; **जानि**—मैं जानता हूँ; **आमि**—मैं; **से**—वह; **भागवत-अर्थ**—*भागवत* का अर्थ; **उत्तम**—अच्छी तरह; **वाखानि**—वर्णन कर सकता हूँ।

अनुवाद

[वल्लभ भट्ट सोच रहे थे :] "मैं महान् वैष्णव हूँ। वैष्णव दर्शन के सारे सिद्धान्तों को सीखने के बाद मैं श्रीमद्भागवत का अर्थ समझ सकता हूँ और बहुत अच्छी तरह से इसकी व्याख्या कर सकता हूँ।"

ভট্টের মনেতে এই ছিল দীর্ঘ গর্ব ।
প্রভুর বচন শুনি' সে হইল খর্ব ॥৫৫॥

भट्टेर मनेते एइ छिल दीर्घ गर्व ।
प्रभुर वचन शुनि' से हइल खर्व ॥५५॥

भट्टेर मनेते—वल्लभ भट्ट के मन में; **एइ**—यही; **छिल**—स्थित था; **दीर्घ**—लम्बे समय से; **गर्व**—गर्व; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **वचन**—वचन; **शुनि'**—सुनकर; **से**—वह; **हइल**—हो गया; **खर्व**—नष्ट।

अनुवाद

वल्लभ भट्ट के मन में ऐसा गर्व दीर्घकाल से चला आ रहा था, किन्तु जब उन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु का उपदेश सुना, तो उनका गर्व चूर-चूर हो गया।

প্রভুর মুখে বৈষ্ণবতা শুনিয়া সবার ।
ভট্টের ইচ্ছা হৈল তাঁ-সবারে দেখিবার ॥৫৬॥

प्रभुर मुखे वैष्णवता शुनिया सबार ।
भट्टेर इच्छा हैल ताँ-सबारे देखिबार ॥ ५६ ॥

प्रभुर मुखे—श्री चैतन्य महाप्रभु के मुख से; **वैष्णवता**—वैष्णवता के आदर्श; **शुनिया सबार**—सभी भक्तों के बारे में सुनकर; **भट्टेर**—वल्लभ भट्ट की; **इच्छा**—इच्छा; **हैल**—हुई; **ताँ-सबारे**—उन सभी को; **देखिबार**—देखने की।

अनुवाद

जब वल्लभ भट्ट ने श्री चैतन्य महाप्रभु के मुख से इन सारे भक्तों की शुद्ध वैष्णवता के बारे में सुना, तो तुरन्त उनकी इच्छा उन सबके दर्शनों के लिए हुई।

भट्ट कहे,—"ए सब वैष्णव रहे कोन् स्थाने? ।
कोन् प्रकारे पाइमु इहाँ-सबार दर्शने? ॥ ५७ ॥

भट्ट कहे—वल्लभ भट्ट ने कहा; **ए सब वैष्णव**—ये सभी वैष्णव; **रहे**—रहते हैं; **कोन् स्थाने**—कहाँ; **कोन् प्रकारे**—किस प्रकार; **पाइमु**—मैं प्राप्त करूँगा; **इहाँ-सबार दर्शने**—इन सभी वैष्णवों के दर्शन।

अनुवाद

वल्लभ भट्ट ने कहा, "ये सारे वैष्णव कहाँ रहते हैं और मैं उनका दर्शन किस तरह कर सकता हूँ?"

प्रभु कहे,—"केह गौड़े, केह देशान्तरे ।
सब आसियाछे रथ-यात्रा देखिबारे ॥ ५८ ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **केह गौड़े**—कुछ बंगाल में; **केह**—कुछ; **देश-अन्तरे**—अन्य राज्यों में; **सब**—सभी; **आसियाछे**—आये हैं; **रथ-यात्रा देखिबारे**—भगवान् जगन्नाथ का रथयात्रा उत्सव देखने के लिए।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "यद्यपि उनमें से कुछ बंगाल में और कुछ अन्य राज्यों में रहते हैं, किन्तु वे सभी रथयात्रा के दर्शन हेतु यहाँ आये हैं।

इहाञि रहेन सबे, बासा—नाना-स्थाने ।
इहाञि पाइबा तुमि सबार दर्शने'' ॥५९॥

इहाञि रहेन सबे, बासा—नाना-स्थाने ।
इहाञि पाइबा तुमि सबार दर्शने" ॥५९॥

इहाञि—यहीं; **रहेन सबे**—वे सभी रह रहे हैं; **बासा**—उनके निवासस्थान; **नाना-स्थाने**—अलग-अलग जगह पर; **इहाञि**—यहीं; **पाइबा**—पाओगे; **तुमि**—आप; **सबार दर्शने**—सबके दर्शन।

अनुवाद

"इस समय वे सब यहीं रह रहे हैं। उनके आवास विभिन्न स्थानों में हैं। यहीं आप उन सबके दर्शन कर सकोगे।"

तबे भट्ट कहे बहु विनय वचन ।
बहु दैन्य करि' प्रभुरे कैल निमन्त्रण ॥६०॥

तबे भट्ट कहे बहु विनय वचन ।
बहु दैन्य करि' प्रभुरे कैल निमन्त्रण ॥६०॥

तबे—तब; **भट्ट कहे**—वल्लभ भट्ट ने कहा; **बहु**—अत्यन्त; **विनय**—विनम्र; **वचन**—वचन; **बहु दैन्य करि'**—पूर्ण विनम्रतापूर्वक; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **कैल निमन्त्रण**—भोजन के लिए निमंत्रित किया।

अनुवाद

तत्पश्चात् अत्यन्त विनय तथा दीनतापूर्वक वल्लभ भट्ट ने श्री चैतन्य महाप्रभु को अपने घर पर भोजन करने के लिए निमन्त्रित किया।

आर दिन सब वैष्णव प्रभु-स्थाने आइला ।
सबा-सने महाप्रभु भट्टे मिलाइला ॥६१॥

आर दिन सब वैष्णव प्रभु-स्थाने आइला ।
सबा-सने महाप्रभु भट्टे मिलाइला ॥ ६१ ॥

आर दिन—अगले दिन; **सब वैष्णव**—सभी वैष्णव; **प्रभु-स्थाने**—श्री चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर; **आइला**—आये; **सबा-सने**—उन सबके साथ; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **भट्टे मिलाइला**—वल्लभ भट्ट को मिलाया।

अनुवाद

अगले दिन जब सारे भक्त श्री चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर आये, तो महाप्रभु ने उस सबसे वल्लभ भट्ट का परिचय कराया।

'वैष्णवे'र तेज देखि' भट्टेर चमत्कार ।
ताँ-सबार आगे भट्ट—खद्योत-आकार ॥ ६२ ॥

'वैष्णवे'र तेज देखि' भट्टेर चमत्कार ।
ताँ-सबार आगे भट्ट—खद्योत-आकार ॥ ६२ ॥

वैष्णवेर—वैष्णवों की; **तेज**—कान्ति; **देखि'**—देखकर; **भट्टेर**—वल्लभ भट्ट को हुआ; **चमत्कार**—आश्चर्य; **ताँ-सबार**—उन सभी के; **आगे**—सामने; **भट्ट**—वल्लभ भट्ट; **खद्योत-आकार**—एक जुगनू के समान।

अनुवाद

वे उनके मुखमण्डलों के तेज को देखकर चकित थे। निस्सन्देह, उन सबके बीच में वल्लभ भट्ट एक जुगनू समान लग रहे थे।

तबे भट्ट बहु महा-प्रसाद आनाइल ।
गण-सह महाप्रभुरे भोजन कराइल ॥ ६३ ॥

तबे भट्ट बहु महा-प्रसाद आनाइल ।
गण-सह महाप्रभुरे भोजन कराइल ॥ ६३ ॥

तबे—उस समय; **भट्ट**—वल्लभ भट्ट; **बहु**—अत्यधिक; **महा-प्रसाद**—भगवान् जगन्नाथ का महाप्रसाद; **आनाइल**—ले आये; **गण-सह महाप्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को उनके संगियों के साथ; **भोजन कराइल**—उन्होंने खिलाया।

अनुवाद

तब वल्लभ भट्ट प्रचुर मात्रा में भगवान् जगन्नाथजी का प्रसाद ले

आये और उन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु तथा उनके संगियों को अच्छी तरह से भोजन कराया।

পরমানন্দ পুরী-সঙ্গে সন্ন্যাসীর গণ ।
এক-দিকে বৈসে সব করিতে ভোজন ॥৬৪॥

परमानन्द पुरी-सङ्गे सन्न्यासीर गण ।
एक-दिके वैसे सब करिते भोजन ॥६४॥

परमानन्द पुरी-सङ्गे—परमानन्द पुरी के साथ; **सन्न्यासीर गण**—श्री चैतन्य महाप्रभु के सभी संन्यासी संगी; **एक-दिके**—एक ओर; **वैसे**—बैठ गये; **सब**—सभी; **करिते भोजन**—प्रसाद गहण करने के लिए।

अनुवाद

परमानन्द पुरी इत्यादि श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे संन्यासी संगी एक ओर बैठ गये और सबने प्रसाद प्राप्त किया।

অদ্বৈত, নিত্যানন্দ-রায়—পার্শ্বে দুই-জন ।
মধ্যে মহাপ্রভু বসিলা, আগে-পাছে ভক্ত-গণ ॥৬৫॥

अद्वैत, नित्यानन्द-राय—पार्श्वे दुइ-जन ।
मध्ये महाप्रभु वसिला, आगे-पाछे भक्त-गण ॥६५॥

अद्वैत—अद्वैत आचार्य; **नित्यानन्द-राय**—नित्यानन्द प्रभु; **पार्श्वे**—दोनों ओर; **दुइ-जन**—दोनों लोग; **मध्ये**—बीच में; **महाप्रभु वसिला**—श्री चैतन्य महाप्रभु बैठ गये; **आगे**—सामने; **पाछे**—पीछे; **भक्त-गण**—सभी भक्त।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु समस्त भक्तों के बीच बैठे। अद्वैत आचार्य तथा नित्यानन्द प्रभु महाप्रभु के दोनों ओर बैठे। अन्य भक्त महाप्रभु के आगे और पीछे बैठे।

গৌড়ের ভক্ত যত কহিতে না পারি ।
অঙ্গনে বসিলা সব হঞা সারি সারি ॥৬৬॥

गौड़ेर भक्त यत कहिते ना पारि ।
अङ्गने वसिला सब हञा सारि सारि ॥ ६६ ॥

गौड़ेर—बंगाल के; **भक्त यत**—सभी भक्त; **कहिते**—वर्णन करने में; **ना पारि**—मैं असमर्थ हूँ; **अङ्गने**—आँगन में; **वसिला**—बैठ गये; **सब**—सभी; **हञा**—होकर; **सारि सारि**—पंक्तियों में।

अनुवाद

बंगाल के सारे भक्त, जिनकी गिनती करने में मैं असमर्थ हूँ, आँगन में पंक्तियों में बैठ गये।

प्रभुर भक्त-गण देखि' भट्टेर चमत्कार ।
प्रत्येके सबार पदे कैल नमस्कार ॥ ६७ ॥

प्रभुर भक्त-गण देखि' भट्टेर चमत्कार ।
प्रत्येके सबार पदे कैल नमस्कार ॥ ६७ ॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **भक्त-गण**—भक्त; **देखि'**—देखकर; **भट्टेर**—वल्लभ भट्ट को; **चमत्कार**—आश्चर्य; **प्रति-एके**—प्रत्येक के; **सबार**—सभी के; **पदे**—चरणकमलों में; **कैल नमस्कार**—उन्होंने प्रणाम किये।

अनुवाद

जब वल्लभ भट्ट ने श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे भक्तों को देखा, तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, और भक्तिवश उन्होंने उनमें से हर एक के चरणकमलों पर नमस्कार निवेदन किया।

स्वरूप, जगदानन्द, काशीश्वर, शङ्कर ।
परिवेशन करे, आर राघव, दामोदर ॥ ६८ ॥

स्वरूप, जगदानन्द, काशीश्वर, शङ्कर ।
परिवेशन करे, आर राघव, दामोदर ॥ ६८ ॥

स्वरूप—स्वरूप; **जगदानन्द**—जगदानन्द; **काशीश्वर**—काशीश्वर; **शङ्कर**—शंकर; **परिवेशन करे**—बाँटने लगे; **आर**—और; **राघव दामोदर**—राघव तथा दामोदर।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर, जगदानन्द, काशीश्वर तथा शंकर ने राघव तथा दामोदर पण्डित को साथ लेकर प्रसाद वितरण का कार्य भार सँभाला।

মহা-প্রসাদ বল্লভ-ভট্ট বহু আনাইল ।
প্রভু-সহ সন্ন্যাসি-গণ ভোজনে বসিল ॥৬৯॥

महा-प्रसाद वल्लभ-भट्ट बहु आनाइल ।
प्रभु-सह सन्न्यासि-गण भोजने वसिल ॥ ६९ ॥

महा-प्रसाद—श्री जगन्नाथ को अर्पित भोग; **वल्लभ-भट्ट**—वल्लभ भट्ट ने; **बहु**—अधिक मात्रा; **आनाइल**—मँगवायी थी; **प्रभु-सह**—श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ; **सन्न्यासि-गण**—सभी संन्यासी; **भोजने वसिल**—प्रसाद ग्रहण करने के लिए बैठ गये।

अनुवाद

वल्लभ भट्ट भगवान् जगन्नाथ को अर्पित ढेर सारा प्रसाद ले आये थे। इस तरह सारे संन्यासी खाने के लिए श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ-साथ बैठ गये।

প্রসাদ পায় বৈষ্ণব-গণ বলে, 'হরি' 'হরি' ।
হরি হরি ধ্বনি উঠে সব ব্রহ্মাণ্ড ভরি' ॥৭০॥

प्रसाद पाय वैष्णव-गण बले, 'हरि' 'हरि' ।
हरि हरि ध्वनि उठे सब ब्रह्माण्ड भरि' ॥ ७० ॥

प्रसाद—प्रसाद; **पाय**—पाते हुए; **वैष्णव-गण**—सभी वैष्णव; **बले**—बोलते; **हरि हरि**—"हरि, हरि"; **हरि हरि ध्वनि**—'हरि-हरि' की ध्वनि; **उठे**—उठती है; **सब ब्रह्माण्ड**—सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को; **भरि'**—पूरित कर दिया।

अनुवाद

प्रसाद पाकर सारे वैष्णवों ने "हरि! हरि!" के पवित्र नाम का उच्चारण किया। हरि के पवित्र नाम की उठती ध्वनि ने सारे ब्रह्माण्ड को पूरित कर दिया।

माला, चन्दन, गुवाक, पान अनेक आनिल ।
सबा' पूजा करि' भट्ट आनन्दित हैल ॥७१॥
माला, चन्दन, गुवाक, पान अनेक आनिल ।
सबा' पूजा करि' भट्ट आनन्दित हैल ॥७१॥

माला—मालाएँ; **चन्दन**—चन्दन लेप; **गुवाक**—मसाले; **पान**—पान; **अनेक**—कई; **आनिल**—लाये; **सबा' पूजा करि'**—सभी वैष्णवों की पूजा करके; **भट्ट**—वल्लभ भट्ट; **आनन्दित हैल**—अत्यन्त प्रसन्न हुए।

अनुवाद

जब सारे वैष्णव खा चुके, तो वल्लभ भट्ट बहुत सी मालाएँ, चन्दन लेप, मसाले तथा पान ले आये। उन्होंने सब भक्तों की आदरपूर्वक पूजा की और इस तरह अत्यन्त सुखी हुए।

रथ-यात्रा-दिने प्रभु कीर्तन आरम्भिला ।
पूर्ववज्जात सम्प्रदाय पृथक्करिला ॥७२॥
रथ-यात्रा-दिने प्रभु कीर्तन आरम्भिला ।
पूर्ववत् सात सम्प्रदाय पृथक् करिला ॥७२॥

रथ-यात्रा-दिने—रथयात्रा उत्सव के दिन; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **कीर्तन आरम्भिला**—संकीर्तन प्रारम्भ किया; **पूर्व-वत्**—पहले की तरह; **सात सम्प्रदाय**—सात टोलियों में; **पृथक् करिला**—उन्होंने बाँटा।

अनुवाद

रथयात्रा के उत्सव के दिन श्री चैतन्य महाप्रभु ने संकीर्तन प्रारम्भ किया। पहले की ही तरह उन्होंने सारे भक्तों को सात टोलियों में बाँट दिया।

अद्वैत, नित्यानन्द, हरिदास, वक्रेश्वर ।
श्रीवास, राघव, पण्डित-गदाधर ॥७३॥
सात जन सात-ठाञि करेन नर्तन ।
'हरि-बोल' बलि' प्रभु करेन भ्रमण ॥७४॥

अद्वैत, नित्यानन्द, हरिदास, वक्रेश्वर ।
श्रीवास, राघव, पण्डित-गदाधर ॥ ७३ ॥
सात जन सात-ठाञि करेन नर्तन ।
'हरि-बोल' बलि' प्रभु करेन भ्रमण ॥ ७४ ॥

अद्वैत—अद्वैत आचार्य; **नित्यानन्द**—भगवान् नित्यानन्द; **हरिदास**—ठाकुर हरिदास; **वक्रेश्वर**—वक्रेश्वर; **श्रीवास**—श्रीवास ठाकुर; **राघव**—राघव; **पण्डित-गदाधर**—गदाधर पण्डित; **सात जन**—सात लोग; **सात-ठाञि**—सात दलों में; **करेन नर्तन**—नाचे; **हरि-बोल बलि'**—"हरि बोल" कहकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **करेन भ्रमण**—घूमते हैं।

अनुवाद

अद्वैत, नित्यानन्द, हरिदास ठाकुर, वक्रेश्वर, श्रीवास ठाकुर, राघव पण्डित तथा गदाधर पण्डित—इन सात भक्तों ने सात टोलियाँ बना लीं और नाचने लगे। श्री चैतन्य महाप्रभु "हरि बोल!" कीर्तन करते हुए एक टोली से दूसरी टोली में विचरण करने लगे।

চৌদ্দ মাদল বাজে উচ্চ সঙ্কীর্তন ।
এক এক নর্তকের প্রেমে ভাসিল ভুবন ॥ ৭৫ ॥
चौद्द मादल बाजे उच्च सङ्कीर्तन ।
एक एक नर्तकेर प्रेमे भासिल भुवन ॥ ७५ ॥

चौद्द मादल—चौदह मृदंग; **बाजे**—बज रहे थे; **उच्च सङ्कीर्तन**—उच्च नाम संकीर्तन; **एक एक**—प्रत्येक दल के; **नर्तकेर**—एक नर्तक के; **प्रेमे**—प्रेमभाव में; **भासिल भुवन**—सम्पूर्ण विश्व डूब गया।

अनुवाद

उच्च संकीर्तन के साथ-साथ चौदह मृदंग गूँजने लगे। हर टोली का एक-एक नर्तक था, जिसके प्रेमाविष्ट नृत्य से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड आप्लावित हो उठा।

দেখি' বল্লভ-ভট্টের হৈল চমৎকার ।
আনন্দে বিহ্বল নাহি আপন-সাম্ভাল ॥ ৭৬ ॥
देखि' वल्लभ-भट्टेर हैल चमत्कार ।
आनन्दे विह्वल नाहि आपन-साम्भाल ॥ ७६ ॥

देखि'—देखकर; **वल्लभ-भट्टेर**—वल्लभ भट्ट को; **हैल चमत्कार**—आश्चर्य हुआ; **आनन्दे विह्वल**—दिव्य आनन्द से विभोर; **नाहि**—नहीं हुआ; **आपन-साम्भाल**—अपनी सामान्य अवस्था बनाये रखना।

अनुवाद

यह सब देखकर वल्लभ भट्ट पूर्णतया चकित थे। वे दिव्य आनन्द से विह्वल और अपने में खोए हुए थे।

তবে মহাপ্রভু সবার নৃত্য রাখিলা ।
পূর্ব্ববতাপনে নৃত্য করিতে লাগিলা ॥৭৭॥

तबे महाप्रभु सबार नृत्य राखिला ।
पूर्ववत् आपने नृत्य करिते लागिला ॥ ७७॥

तबे—फिर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **सबार**—उन सभी का; **नृत्य राखिला**—नृत्य रुकवाया; **पूर्ववत्**—पहले की तरह; **आपने**—स्वयं; **नृत्य**—नृत्य; **करिते लागिला**—करने लगे।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने सबका नृत्य रुकवा दिया और पहले की तरह वे स्वयं नाचने लगे।

প্রভুর সৌন্দর্য দেখি আর প্রেমোদয় ।
'এই ত' সাক্ষাৎকৃষ্ণ' ভট্টের হইল নিশ্চয় ॥৭৮॥

प्रभुर सौन्दर्य्य देखि आर प्रेमोदय ।
'एइ त' साक्षात्कृष्ण' भट्टेर हइल निश्चय ॥ ७८॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **सौन्दर्य्य**—सुन्दरता; **देखि**—देखकर; **आर**—तथा; **प्रेम-उदय**—प्रेमभाव का प्राकट्य; **एइ**—ये; **त'**—निश्चित; **साक्षात्**—साक्षात्; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **भट्टेर**—वल्लभ भट्ट का; **हइल**—था; **निश्चय**—निश्चय।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के सौन्दर्य तथा उनके प्रेमावेश का उदय देखकर वल्लभ भट्ट ने निष्कर्ष निकाला कि, "निस्सन्देह, ये भगवान् कृष्ण हैं।"

এত মত রথ-যাত্রা সকলে দেখিল ।
প্রভুর চরিত্রে ভট্টের চমৎকার হৈল ॥৭৯॥

एत मत रथ-यात्रा सकले देखिल ।
प्रभुर चरित्रे भट्टेर चमत्कार हैल ॥७९॥

एत मत—इस प्रकार; **रथ-यात्रा**—रथयात्रा उत्सव; **सकले**—सभी ने; **देखिल**—देखा; **प्रभुर चरित्रे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरित्र द्वारा; **भट्टेर**—वल्लभ भट्ट को; **चमत्कार हैल**—आश्चर्य हुआ।

अनुवाद

इस तरह वल्लभ भट्ट ने रथयात्रा उत्सव देखा। वे श्री चैतन्य महाप्रभु के चरित्र से चकित थे।

যাত্রানন্তরে ভট্ট যাই মহাপ্রভু-স্থানে ।
প্রভু-চরণে কিছু কৈল নিবেদনে ॥৮০॥

यात्रानन्तरे भट्ट याइ महाप्रभु-स्थाने ।
प्रभु-चरणे किछु कैल निवेदने ॥८०॥

यात्रा-अनन्तरे—रथयात्रा के बाद; **भट्ट**—वल्लभ भट्ट; **याइ**—जाकर; **महाप्रभु-स्थाने**—श्री चैतन्य महाप्रभु के निवास पर; **प्रभु-चरणे**—महाप्रभु के चरणकमलों में; **किछु**—कुछ; **कैल**—की; **निवेदने**—प्रार्थना।

अनुवाद

रथयात्रा समाप्त होने के बाद, एक दिन वल्लभ भट्ट श्री चैतन्य महाप्रभु के निवासस्थान पर गये और उनके चरणकमलों पर एक विनती की।

''ভাগবতের টীকা কিছু করিয়াছি লিখন ।
আপনে মহাপ্রভু যদি করেন শ্রবণ'' ॥৮১॥

"भागवतेर टीका किछु करियाछि लिखन ।
आपने महाप्रभु यदि करेन श्रवण" ॥८१॥

भागवतेर—*श्रीमद्भागवत* पर; **टीका**—व्याख्या; **किछु**—कुछ; **करियाछि लिखन**—मैंने लिखी है; **आपने**—आप; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **यदि**—यदि; **करेन श्रवण**—सुनेंगे।

अनुवाद

"मैंने श्रीमद्भागवत पर कुछ टीका लिखी है। क्या कृपा करके आप इसे सुनेंगे?"

प्रभु कहे,—"भागवतार्थ बुझिते ना पारि ।
भागवतार्थ शुनिते आमि नहि अधिकारी ॥८२॥

प्रभु कहे,—"भागवतार्थ बुझिते ना पारि ।
भागवतार्थ शुनिते आमि नहि अधिकारी ॥८२॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया; **भागवत-अर्थ**—*श्रीमद्भागवत* का अर्थ; **बुझिते ना पारि**—मैं समझ नहीं सकता; **भागवत-अर्थ**—*श्रीमद्भागवत* का तात्पर्य; **शुनिते**—सुनने के लिए; **आमि नहि अधिकारी**—मैं योग्य पात्र नहीं हूँ।

अनुवाद

महाप्रभु ने उत्तर दिया, "मैं श्रीमद्भागवत का अर्थ नहीं समझता। निस्सन्देह, मैं उसका अर्थ सुनने का सुपात्र नहीं हूँ।"

वसि' कृष्ण-नाम मात्र करिये ग्रहणे ।
सङ्ख्या-नाम पूर्ण मोर नहे रात्रि-दिने ॥८३॥

वसि' कृष्ण-नाम मात्र करिये ग्रहणे ।
सङ्ख्या-नाम पूर्ण मोर नहे रात्रि-दिने ॥८३॥

वसि'—बैठकर; **कृष्ण-नाम**—भगवान् कृष्ण का पवित्र नाम; **मात्र**—केवल; **करिये ग्रहणे**—मैं जप करता हूँ; **सङ्ख्या-नाम**—निर्धारित संख्यापूर्वक; **पूर्ण**—पूरा; **मोर**—मेरा; **नहे**—नहीं; **रात्रि-दिने**—सम्पूर्ण दिन और रात को।

अनुवाद

"मैं मात्र बैठकर कृष्ण के पवित्र नाम का जप करने का प्रयत्न करता हूँ और यद्यपि मैं रात-दिन नाम-जप करता हूँ, तो भी मैं नियत संख्या पूरी नहीं कर पाता।"

भट्ट कहे, "कृष्ण-नामेर अर्थ-व्याख्याने ।
विस्तार करिराछि, ताहा करह श्रवणे" ॥८४॥

भट्ट कहे, "कृष्ण-नामेर अर्थ-व्याख्याने ।
विस्तार कैराछि, ताहा करह श्रवणे" ॥ ८४॥

भट्ट कहे—वल्लभ भट्ट ने कहा; **कृष्ण-नामेर**—कृष्ण के पवित्र नाम के; **अर्थ-व्याख्याने**—अर्थ की व्याख्या; **विस्तार**—अत्यन्त विस्तारपूर्वक; **कैराछि**—मैंने बनाई है; **ताहा**—वह; **करह श्रवणे**—कृपया सुनिये।

अनुवाद

वल्लभ भट्ट ने कहा, "मैंने कृष्ण के पवित्र नाम के अर्थ की विस्तार से व्याख्या करने का प्रयास किया है। कृपया उस व्याख्या को सुनें।"

প্রভু কহে,—"কৃষ্ণ-নামের বহু অর্থ না মানি ।
'শ্যাম-সুন্দর' 'যশোদা-নন্দন,'—এই-মাত্র জানি ॥ ৮৫॥

प्रभु कहे,—"कृष्ण-नामेर बहु अर्थ ना मानि ।
'श्याम-सुन्दर' 'यशोदा-नन्दन,'—एइ-मात्र जानि ॥ ८५॥

प्रभु कहे—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया; **कृष्ण-नामेर**—कृष्ण के पवित्र नाम के; **बहु अर्थ**—अनेक अर्थ; **ना मानि**—मैं नहीं स्वीकार करता; **श्याम-सुन्दर**—श्यामसुन्दर; **यशोदा-नन्दन**—यशोदानन्दन; **एइ-मात्र**—केवल यही; **जानि**—मैं जानता हूँ।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "मैं कृष्ण के पवित्र नाम के कई अलग-अलग अर्थ स्वीकार नहीं करता। मैं तो इतना ही जानता हूँ कि भगवान् कृष्ण श्यामसुन्दर तथा यशोदानन्दन हैं। बस, मैं इतना ही जानता हूँ।

তমাল-শ্যামল-ত্বিষি শ্রী-যশোদা-স্তনন্ধয়ে ।
কৃষ্ণ-নাম্নো রূঢ়িরিতি সর্ব-শাস্ত্র-বিনির্ণয়ঃ ॥ ৮৬॥

तमाल-श्यामल-त्विषि श्री-यशोदा-स्तनन्धये ।
कृष्ण-नाम्नो रूढ़िरिति सर्व-शास्त्र-विनिर्णयः ॥ ८६॥

तमाल-श्यामल-त्विषि—जिसकी कान्ति गहरे नीले तमाल वृक्ष के समान है; **श्री-यशोदा-स्तनम्-धये**—माता यशोदा के स्तन का पान करनेवाले; **कृष्ण-नाम्नः**—कृष्ण नाम

का; **रूढ़िः**—मुख्य अर्थ; **इति**—यही; **सर्व-शास्त्र**—सारे प्रामाणिक शास्त्रों का; **विनिर्णयः**—निष्कर्ष।

अनुवाद

"'कृष्ण के पवित्र नाम का एकमात्र तात्पर्य है कि वे तमाल वृक्ष की तरह गहरे नीले हैं और माता यशोदा के पुत्र हैं। यही समस्त प्रामाणिक शास्त्रों का निर्णय है।"

तात्पर्य

यह श्लोक *नाम कौमुदी* से है।

এই অর্থ আমি মাত্র জানিয়ে নির্ধার ।
আর সর্ব-অর্থে মোর নাহি অধিকার'' ॥৮৭॥

এই অর্থ আমি মাত্র জানিয়ে নির্ধার ।
আর সর্ব-অর্থে মোর নাহি অধিকার" ॥৮৭॥

এই অর্থ—यही अर्थ; **আমি**—मैं; **মাত্র**—केवल; **জানিয়ে**—जानता हूँ; **নির্ধার**—निष्कर्ष; **আর**—अन्य; **সর্ব**—सभी; **অর্থে**—अर्थों में; **মোর**—मेरी; **নাহি**—नहीं है; **অধিকার**—समझने की क्षमता।

अनुवाद

"मैं श्यामसुन्दर तथा यशोदानन्दन—इन्हीं दो नामों को निश्चित रूप से जानता हूँ। मैं कोई अन्य अर्थ नहीं समझता, न ही उनको समझने की मुझमें क्षमता है।

ফল্গু-প্রায় ভট্টের নামাদি সব-ব্যাখ্যা ।
সর্বজ্ঞ প্রভু জানি' তারে করেন উপেক্ষা ॥৮৮॥

ফল্গু-প্রায় ভট্টের নামাদি সব-ব্যাখ্যা ।
সর্বজ্ঞ প্রভু জানি' তারে করেন উপেক্ষা ॥৮৮॥

ফল্গু-প্রায়—व्यर्थ प्रायः; **ভট্টের**—वल्लभ भट्ट की; **নাম-আদি**—नाम आदि की; **সব**—सभी; **ব্যাখ্যা**—व्याख्याएँ; **সর্ব-জ্ঞ**—सब जानने वाले; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **জানি'**—जानकर; **তারে**—उनकी; **করেন উপেক্ষা**—उपेक्षा करते हैं।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु सर्वज्ञ हैं, अतएव वे यह समझ गये कि वल्लभ भट्ट की कृष्ण के पवित्र नाम तथा श्रीमद्भागवत की व्याख्याएँ व्यर्थ हैं। अतएव उन्होंने उनकी परवाह नहीं की।

বিমনা হঞা ভট্ট গেলা নিজ-ঘর ।
প্রভু-বিষয়ে ভক্তি কিছু হইল অন্তর ॥৮৯॥

विमना हञा भट्ट गेला निज-घर ।
प्रभु-विषये भक्ति किछु हइल अन्तर ॥८९॥

विमना हञा—दुःखी होकर; **भट्ट**—वल्लभ भट्ट; **गेला**—गये; **निज-घर**—अपने घर; **प्रभु-विषये**—श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रति; **भक्ति**—विश्वास; **किछु**—कुछ; **हइल**—हो गया; **अन्तर**—परिवर्तित।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु ने उनकी व्याख्याएँ सुनने से साफ मना कर दिया, तो वल्लभ भट्ट खिन्न होकर अपने घर चले गये। महाप्रभु के प्रति उसकी श्रद्धा तथा भक्ति बदल गई।

তবে ভট্ট গেলা পণ্ডিত-গোসাঞির ঠাঞি ।
নানা মতে প্রীতি করি' করে আসা-যাই ॥৯০॥

तबे भट्ट गेला पण्डित-गोसाञिर ठाञि ।
नाना मते प्रीति करि' करे आसा-याइ ॥९०॥

तबे—फिर; **भट्ट**—वल्लभ भट्ट; **गेला**—गये; **पण्डित-गोसाञिर ठाञि**—गदाधर पण्डित के निवास पर; **नाना मते**—अनेक प्रकार से; **प्रीति करि'**—स्नेह दिखाकर; **करे आसा-याइ**—आते और जाते।

अनुवाद

तत्पश्चात् वल्लभ भट्ट गदाधर पण्डित के घर गये। वे विभिन्न प्रकार से स्नेह प्रदर्शित करके आते-जाते रहे और उनके साथ सम्बन्ध बनाये रखे।

প্রভুর উপেক্ষায় সব নীলাচলের জন ।
ভট্টের ব্যাখ্যান কিছু না করে শ্রবণ ॥৯১॥

প্রভুর উপেক্ষায় সব নীলাচলের জন ।
ভট্টের ব্যাখ্যান কিছু না করে শ্রবণ ॥ ৯১ ॥

প্রভুর—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **উপেক্ষায়**—उपेक्षा के कारण; **সব**—सब; **নীলাচলের জন**—जगन्नाथ पुरी में लोग; **ভট্টের ব্যাখ্যান**—वल्लभ भट्ट की व्याख्या; **কিছু**—कुछ; **না করে শ্রবণ**—नहीं सुनते।

अनुवाद

चूँकि श्री चैतन्य महाप्रभु ने वल्लभ भट्ट को गम्भीरतापूर्वक ग्रहण नहीं किया, इसलिए जगन्नाथपुरी के किसी भी व्यक्ति ने उनकी कोई व्याख्या नहीं सुनी।

লজ্জিত হৈল ভট্ট, হৈল অপমানে ।
দুঃখিত হঞা গেল পণ্ডিতের স্থানে ॥৯২॥

লজ্জিত হৈল ভট্ট, হৈল অপমানে ।
দুঃখিত হঞা গেল পণ্ডিতের স্থানে ॥ ৯২ ॥

লজ্জিত—शर्मिंदा; **হৈল**—होकर; **ভট্ট**—वल्लभ भट्ट; **হৈল অপমানে**—अपमानित अनुभव कर; **দুঃখিত হঞা**—दुःखी होकर; **গেল**—गये; **পণ্ডিতের স্থানে**—गदाधर पण्डित के पास।

अनुवाद

लज्जित, अपमानित तथा दुःखित वल्लभ भट्ट गदाधर पण्डित के पास गये।

দৈন্য করি' কহে,—"নিলুঁ তোমার শরণ ।
তুমি কৃপা করি' রাখ আমার জীবন ॥৯৩॥

দৈন্য করি' কহে,—"নিলুঁ তোমার শরণ ।
তুমি কৃপা করি' রাখ আমার জীবন ॥ ৯৩ ॥

দৈন্য করি'—अत्यन्त विनम्रतापूर्वक; **কহে**—बोले; **নিলুঁ**—मैंने ली है; **তোমার শরণ**—आपकी शरण; **তুমি**—आप; **কৃপা করি'**—कृपा करके; **রাখ**—बचाइये; **আমার জীবন**—मेरा जीवन।

अनुवाद

उनके पास अत्यन्त विनीत भाव से पहुँचकर वल्लभ भट्ट ने कहा, "मान्यवर, मैंने आपकी शरण ले रखी है। आप मुझ पर कृपालु हों और मेरे प्राणों की रक्षा करें।

কৃষ্ণ-নাম-ব্যাখ্যা যদি করহ শ্রবণ ।
তবে মোর লজ্জা-পঙ্ক হয় প্রক্ষালন'' ॥৯৪॥

कृष्ण-नाम-व्याख्या य़दि करह श्रवण ।
तबे मोर लज्जा-पङ्क हय प्रक्षालन" ॥ ९४॥

कृष्ण-नाम—भगवान् कृष्ण के नाम की; **व्याख्या**—व्याख्या; **य़दि**—यदि; **करह श्रवण**—आप सुनें; **तबे**—तो; **मोर**—मेरा; **लज्जा-पङ्क**—अपमान का कीचड़; **हय**—होगा; **प्रक्षालन**—धुल जायेगा।

अनुवाद

"कृपा करके आप कृष्णनाम के अर्थ की मेरी व्याख्या सुनें। इससे मेरे ऊपर जो लज्जा का कीचड़ पड़ा है, वह धुल सकेगा।"

সঙ্কটে পড়িল পণ্ডিত, করয়ে সংশয় ।
কি করিবেন,—একো, করিতে না পারে নিশ্চয় ॥৯৫॥

सङ्कटे पड़िल पण्डित, करये संशय ।
कि करिबेन,—एको, करिते ना पारे निश्चय ॥ ९५॥

सङ्कटे—शंका में; **पड़िल पण्डित**—गदाधर पण्डित पड़ गये; **करये संशय**—सन्देह करने लगे; **कि करिबेन**—वे क्या करेंगे; **एको**—अकेले; **करिते ना पारे निश्चय**—निश्चय नहीं कर पाये।

अनुवाद

इस तरह पण्डित गोसांइ संकट में पड़ गये। वे ऐसे संशय में थे कि उनके लिए यह निश्चित कर पाना कठिन हो गया कि वे क्या करें।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु ने वल्लभ भट्ट को गम्भीरता से नहीं लिया। इसलिए पण्डित गोसांइ अर्थात् गदाधर गोसांइ बड़े ही संशय में पड़ गये। यदि वे वल्लभ

भट्ट की कृष्ण-नाम व्याख्या को सुनते हैं, तो उनकी स्थिति क्या होगी? निश्चय ही, श्री चैतन्य महाप्रभु रुष्ट होंगे। इसलिए गदाधर पण्डित गोसांइ कोई निर्णय नहीं कर पाये।

यद्यपि पण्डित आर ना कैला अङ्गीकार ।
भट्ट याइ' तबु पड़े करि' बलात्कार ॥९६॥

यद्यपि पण्डित आर ना कैला अङ्गीकार ।
भट्ट याइ' तबु पड़े करि' बलात्कार ॥ ९६ ॥

यद्यपि—यद्यपि; **पण्डित**—गदाधर पण्डित; **आर**—भी; **ना कैला अङ्गीकार**—स्वीकार नहीं किये; **भट्ट**—वल्लभ भट्ट; **याइ'**—जाकर; **तबु**—फिर भी; **पड़े**—पढ़ते रहे; **करि' बलात्कार**—जबरदस्ती।

अनुवाद

यद्यपि गदाधर पण्डित गोसांइ सुनना नहीं चाहते थे, किन्तु वल्लभ भट्ट अत्यन्त बलपूर्वक से अपनी व्याख्या पढ़ने लगे।

आभिजात्ये पण्डित करिते नारे निषेधन ।
"एइ सङ्कटे राख, कृष्ण लइलाँ शरण ॥९७॥

आभिजात्ये पण्डित करिते नारे निषेधन ।
"ए सङ्कटे राख, कृष्ण लइलाङ शरण ॥ ९७ ॥

आभिजात्ये—उनके उच्च पद के कारण; **पण्डित**—गदाधर पण्डित; **करिते नारे निषेधन**—मना नहीं कर पाये; **ए सङ्कटे**—इस संकट से; **राख**—कृपया रक्षा करो; **कृष्ण**—हे भगवान् कृष्ण; **लइलाङ**—मैं लेता हूँ; **शरण**—शरण।

अनुवाद

चूँकि वल्लभ भट्ट विद्वान ब्राह्मण थे, अतएव गदाधर पण्डित उन्हें रोक नहीं पाये। इस तरह उन्होंने कृष्ण का ध्यान किया। उन्होंने प्रार्थना की, "हे कृष्ण, इस संकट में मेरी रक्षा करें। मैं आपकी शरण में आया हूँ।

अन्तर्यामी प्रभु जानिबेन मोर मन ।
ताँरे भय नाहि किछु, 'विषम' ताँर गण" ॥९८॥

अन्तर्यामी प्रभु जानिबेन मोर मन ।
ताँरे भय नाहि किछु, 'विषम' ताँर गण" ॥ ९८ ॥

अन्तर्यामी—सबके हृदय में विद्यमान; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **जानिबेन**—जान जायेंगे; **मोर मन**—मेरा मन; **ताँरे**—उनका; **भय**—भय; **नाहि**—नहीं; **किछु**—कुछ; **विषम**—जटिल; **ताँर गण**—उनके संगीगण।

अनुवाद

" श्री चैतन्य महाप्रभु जन-जन के हृदय में विद्यमान हैं, अतः वे निश्चय ही मेरे मन की बात जान लेंगे। इसलिए मुझे उनसे भय नहीं है। किन्तु उनके संगी अत्यन्त आलोचना-पटु हैं।"

तात्पर्य

पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में श्री चैतन्य महाप्रभु जन-जन के हृदय में उपस्थित रहते हैं। इसलिए वे उस परिस्थिति को जान जायेंगे, जिसके अन्तर्गत पण्डित गोसांइ को वल्लभ भट्ट की व्याख्या सुननी पड़ी और वे निश्चय ही रुष्ट नहीं होंगे। किन्तु, श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ रहने वाले वैष्णवगण गदाधर पण्डित के आन्तरिक मनोभावों को नहीं समझ सकेंगे और वे आरोप लगा सकते हैं कि श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा उपेक्षा किये जाने पर भी उन्होंने वल्लभ भट्ट के साथ समझौता कर लिया। गदाधर पण्डित गोसांइ इस तरह गम्भीरतापूर्वक विचार कर रहे थे।

यद्यपि विचारे पण्डितेर नाहि किछु दोष ।
तथापि प्रभुर गण ताँरे करे प्रणय-रोष ॥ ९९ ॥
यद्यपि विचारे पण्डितेर नाहि किछु दोष ।
तथापि प्रभुर गण ताँरे करे प्रणय-रोष ॥ ९९ ॥

यद्यपि—यद्यपि; **विचारे**—देखने पर; **पण्डितेर**—गदाधर पण्डित का; **नाहि किछु दोष**—कोई दोष नहीं था; **तथापि**—फिर भी; **प्रभुर गण**—श्री चैतन्य महाप्रभु के गण; **ताँरे**—उनके प्रति; **करे प्रणय-रोष**—प्रेमपूर्ण क्रोध दिखाया।

अनुवाद

यद्यपि गदाधर पण्डित गोसांइ का रंच भर भी दोष नहीं था, किन्तु श्री चैतन्य महाप्रभु के कुछ भक्तों ने उनके प्रति स्नेहमय रोष प्रकट किया।

প্রত্যহ বল্লভ-ভট্ট আইসে প্রভু-স্থানে ।
'উদ্গ্রাহাদি' প্রায় করে আচার্যাদি-সনে ॥ ১০০ ॥

প্রত্যহ বল্লভ-ভট্ট আইসে প্রভু-স্থানে ।
'উদ্গ্রাহাদি' প্রায় করে আচার্য্যাদি-সনে ॥ ১০০ ॥

প্রতি-অহ—প্রতিদিন; **বল্লভ-ভট্ট**—বল্লভ भट्ट; **আইসে**—आते; **প্রভু-স্থানে**—भगवान् चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर; **উদ্গ্রাহ-আদি প্রায়**—व्यर्थ के तर्क; **করে**—करते; **আচার্য্য-আদি-সনে**—अद्वैत आचार्य तथा अन्यों के साथ।

अनुवाद

वल्लभ भट्ट प्रति दिन श्री चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर आते और अद्वैत आचार्य तथा स्वरूप दामोदर जैसे महापुरुषों से व्यर्थ का तर्क करते थे।

যেই কিছু করে ভট্ট 'সিদ্ধান্ত' স্থাপন ।
শুনিতেই আচার্য তাহা করেন খণ্ডন ॥ ১০১ ॥

যেই কিছু করে ভট্ট 'সিদ্ধান্ত' স্থাপন ।
শুনিতেই আচার্য্য তাহা করেন খণ্ডন ॥ ১০১ ॥

যেই—जो भी; **কিছু**—कुछ; **করে**—करते; **ভট্ট**—वल्लभ भट्ट; **সিদ্ধান্ত**—निष्कर्ष; **স্থাপন**—स्थापित; **শুনিতেই**—सुनते ही; **আচার্য্য**—अद्वैत आचार्य; **তাহা**—वह; **করেন খণ্ডন**—खण्डन कर देते।

अनुवाद

वल्लभ भट्ट उत्सुकतापूर्वक जितने भी सिद्धान्त प्रस्तुत करते, उन सबका खण्डन अद्वैत आचार्य जैसे भक्त कर देते।

আচার্যাদি-আগে ভট্ট যবে যবে যায় ।
রাজহংস-মধ্যে যেন রহে বক-প্রায় ॥ ১০২ ॥

আচার্য্যাদি-আগে ভট্ট যবে যবে যায় ।
রাজহংস-মধ্যে যেন রহে বক-প্রায় ॥ ১০২ ॥

আচার্য্য-আদি-আগে—अद्वैत आचार्य तथा अन्यों के समक्ष; **ভট্ট**—वल्लभ भट्ट; **যবে**

यबे—जब भी; **याय**—जाते; **राज-हंस-मध्ये**—श्वेत हंसों की सभा में; **येन**—जैसे; **रहे**—रहते; **बक-प्राय**—बगुले के समान।

अनुवाद

जब भी वल्लभ भट्ट अद्वैत आचार्य इत्यादि भक्तों की सभा में प्रवेश करते, वे श्वेत हंसों की सभा में बगुले जैसे प्रतीत होते।

এক-দিন ভট্ট পুছিল আচার্যেরে ।
''জীব-'প্রকৃতি' 'পতি' করি' মানয়ে কৃষ্ণেরে ॥১০৩॥

एक-दिन भट्ट पुछिल आचार्य्येरे ।
"जीव-'प्रकृति' 'पति' करि' मानये कृष्णेरे ॥१०३॥

एक-दिन—एक दिन; **भट्ट**—वल्लभ भट्ट ने; **पुछिल आचार्य्येरे**—अद्वैत आचार्य से पूछा; **जीव**—जीवात्मा; **प्रकृति**—स्त्री; **पति**—पति में; **करि'**—जैसे; **मानये कृष्णेरे**—कृष्ण को स्वीकार करते हैं।

अनुवाद

एक दिन वल्लभ भट्ट ने अद्वैत आचार्य से कहा, "प्रत्येक जीव प्रकृति (स्त्री) है और वह कृष्ण को अपना पति मानता है।

পতি-ব্রতা হঞা পতির নাম নাহি লয় ।
তোমরা কৃষ্ণ-নাম লহ,—কোন্ধর্ম হয়?'' ॥১০৪॥

पति-व्रता हञा पतिर नाम नाहि लय ।
तोमरा कृष्ण-नाम लह,—कोन् धर्म हय?" ॥१०४॥

पति-व्रता—पति को समर्पित; **हञा**—होकर; **पतिर**—पति का; **नाम**—नाम; **नाहि लय**—नहीं लेती; **तोमरा**—आप सब; **कृष्ण-नाम-लह**—कृष्ण का नाम जप करते हैं; **कोन्**—क्या; **धर्म**—धार्मिक नियम; **हय**—यह है।

अनुवाद

"पतिव्रता स्त्री का धर्म है कि वह अपने पति का नाम न ले, किन्तु आप सब लोग तो कृष्ण के नाम का उच्चारण करते हैं। इसे किस तरह धर्म कहा जा सकता है?"

आचार्य कहे,—"आगे तोमार 'धर्म' मूर्तिमान् ।
ईंहारे पुछह, ईंह करिबेन इहार समाधान ॥ १०५ ॥

आचार्य्य कहे,—"आगे तोमार 'धर्म' मूर्तिमान् ।
ईंहारे पुछह, ईंह करिबेन इहार समाधान ॥ १०५ ॥

आचार्य्य कहे—अद्वैत आचार्य ने कहा; **आगे**—सामने; **तोमार**—आपके; **धर्म**—धार्मिक सिद्धान्त; **मूर्तिमान्**—मूर्त रूप; **ईंहारे पुछह**—इनसे पूछो; **ईंह**—वे; **करिबेन**—करेंगे; **इहार**—इसका; **समाधान**—समाधान।

अनुवाद

अद्वैत आचार्य ने उत्तर दिया, "आपके समक्ष धर्म के साक्षात् मूर्तिमान् स्वरूप श्री चैतन्य महाप्रभु हैं। आप उनसे पूछो, तो वे ही आपको सही उत्तर देंगे।"

शुनि' प्रभु कहेन,—"तुमि ना जान धर्म-मर्म ।
स्वामि-आज्ञा पाले,—एइ पति-व्रता-धर्म ॥ १०६ ॥

शुनि' प्रभु कहेन,—"तुमि ना जान धर्म-मर्म ।
स्वामि-आज्ञा पाले,—एइ पति-व्रता-धर्म ॥ १०६ ॥

शुनि'—सुनकर; **प्रभु कहेन**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **तुमि**—आप; **ना जान**—नहीं जानते; **धर्म-मर्म**—वास्तविक धर्म के रहस्य को; **स्वामि**—स्वामी का; **आज्ञा**—आदेश; **पाले**—पालन करती है; **एइ**—यह; **पति-व्रता-धर्म**—एक पतिव्रता स्त्री का धर्म है।

अनुवाद

यह सुनकर श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "हे वल्लभ भट्ट, आप धर्म के सिद्धान्तों को नहीं जानते। वास्तव में पतिव्रता स्त्री का सर्वप्रथम कर्तव्य यह है कि वह अपने पति की आज्ञा का पालन करे।

पतिर आज्ञा,—निरन्तर ताँर नाम लइते ।
पतिर आज्ञा पति-व्रता ना पारे लङ्घिते ॥ १०७ ॥

पतिर आज्ञा,—निरन्तर ताँर नाम लइते ।
पतिर आज्ञा पति-व्रता ना पारे लङ्घिते ॥ १०७ ॥

पतिर आज्ञा—पति का आदेश है; **निरन्तर**—सदैव; **ताँर**—उनका; **नाम**—नाम; **लइते**—जप करना; **पतिर आज्ञा**—पति का आदेश; **पति-व्रता**—समर्पित पत्नी; **ना पारे लङ्घिते**—उल्लंघन नहीं कर सकती।

अनुवाद

"कृष्ण की आज्ञा है कि उनके नाम का निरन्तर कीर्तन हो। इसलिए जो स्त्री पतिरूप कृष्ण के परायण है, उसे भगवान् के नाम का कीर्तन करना चाहिए, क्योंकि वह अपने पति के आदेश का उल्लघंन नहीं कर सकती।

অতএব নাম লয়, নামের 'ফল' পায় ।
নামের ফলে কৃষ্ণ-পদে 'প্রেম' উপজায়'' ॥১০৮॥

অতএব নাম লয়, নামের 'ফল' পায় ।
নামের ফলে কৃষ্ণ-পদে 'প্রেম' উপজায়" ॥১০৮॥

অতএব—इसलिए; **নাম লয়**—पवित्र नाम जप करता है; **নামের**—नाम का; **ফল**—परिणाम; **পায়**—प्राप्त करता है; **নামের ফলে**—पवित्र नाम जप के फलस्वरूप; **কৃষ্ণ-পদে**—कृष्ण के चरणकमलों में; **প্রেম**—प्रेमभाव; **উপজায়**—विकसित हो जाता है।

अनुवाद

"इस धार्मिक सिद्धान्त का पालन करते हुए कृष्ण का शुद्ध भक्त सदैव उनके पवित्र नाम का कीर्तन करता है। इसके फलस्वरूप उसे कृष्ण-प्रेम का फल प्राप्त होता है।"

শুনিয়া বল্লভ-ভট্ট হৈল নির্বচন ।
ঘরে যাই' মনে দুঃখে করেন চিন্তন ॥১০৯॥

শুনিয়া বল্লভ-ভট্ট হৈল নির্বচন ।
ঘরে যাই' মনে দুঃখে করেন চিন্তন ॥১০৯॥

শুনিয়া—सुनकर; **বল্লভ-ভট্ট**—वल्लभ भट्ट; **হৈল**—हो गये; **নির্বচন**—मौन; **ঘরে যাই'**—घर लौटकर; **মনে**—मन में; **দুঃখে**—अप्रसन्न होकर; **করেন চিন্তন**—सोचने लगे।

अनुवाद

यह सुनकर वल्लभ भट्ट मूक हो गये। वे अत्यन्त दुःखी होकर घर लौट आये और इस तरह विचार करने लगे।

"नित्य आमार एई सभाय हय कक्षा-पात ।
एक-दिन उपरे यदि हय मोर बाৎ ॥ ११०॥
तबे सुख हय, आर सब लज्जा याय ।
स्व-वचन स्थापिते आमि कि करि उपाय?" ॥ १११॥

"नित्य आमार एइ सभाय हय कक्षा-पात ।
एक-दिन उपरे यदि हय मोर बात् ॥ ११०॥
तबे सुख हय, आर सब लज्जा याय ।
स्व-वचन स्थापिते आमि कि करि उपाय?" ॥ १११॥

नित्य—प्रतिदिन; **आमार**—मेरी; **एइ**—इस; **सभाय**—सभा में; **हय**—होती है; **कक्षा-पात**—पराजय; **एक-दिन**—एक दिन; **उपरे**—ऊपर; **यदि**—यदि; **हय**—हो जायें; **मोर**—मेरे; **बात्**—वचन; **तबे**—तब; **सुख**—प्रसन्नता; **हय**—हो; **आर**—तथा; **सब**—सभी; **लज्जा**—शर्मिंदगी; **याय**—चली जाये; **स्व-वचन**—मेरा विचार; **स्थापिते**—स्थापित करने के लिए; **आमि**—मैं; **कि**—क्या; **करि**—करूँ; **उपाय**—उपाय।

अनुवाद

"मैं इस सभा में प्रति दिन पराजित हो जाता हूँ। यदि कदाचित् किसी दिन मैं विजयी हो जाऊँ, तो वह मेरे लिए सुख का महान् स्त्रोत होगा और मेरी सारी लज्जा जाती रहेगी। किन्तु अपने कथनों को स्थापित करने के लिए मैं किन साधनों को अपनाऊँ?"

आर दिन आसि' वसिला प्रभूरे नमस्करि' ।
सभाते कहेन किछू मने गर्व करि' ॥ ११२॥
आर दिन आसि' वसिला प्रभुरे नमस्करि' ।
सभाते कहेन किछु मने गर्व करि' ॥ ११२॥

आर दिन—अगले दिन; **आसि'**—आकर; **वसिला**—बैठ गये; **प्रभुरे नमस्करि'**—

भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु को प्रणाम करके; **सभाते**—सभा में; **कहेन**—वे बोले; **किछु**—कुछ; **मने**—मन में; **गर्व करि'**—गर्व करके।

अनुवाद

अगले दिन जब वे श्री चैतन्य महाप्रभु की सभा में आये, तो महाप्रभु को नमस्कार करके वे बैठ गये और बड़े ही गर्व से कुछ कहने लगे।

"भागवते स्वामीर व्याख्यान कैराछि खण्डन ।
लइते ना पारि ताँर व्याख्यान-वचन ॥ ११३ ॥

"भागवते स्वामीर व्याख्यान कैराछि खण्डन ।
लइते ना पारि ताँर व्याख्यान-वचन ॥ ११३ ॥

भागवते—*श्रीमद्भागवत* पर अपनी टीका में; **स्वामीर**—श्रीधर स्वामी की; **व्याख्यान**—व्याख्या; **कैराछि खण्डन**—मैंने खण्डन किया है; **लइते ना पारि**—मैं स्वीकार नहीं कर सकता; **ताँर**—उनकी; **व्याख्यान-वचन**—व्याख्या को।

अनुवाद

उन्होंने कहा, "मैंने अपनी श्रीमद्भागवत की टीका में श्रीधर स्वामी की व्याख्याओं का खण्डन किया है। मैं उनकी व्याख्याओं को स्वीकार नहीं कर सकता।

सेइ व्याख्या करेन याहाँ येइ पड़े आनि' ।
एक-वाक्यता नाहि, ताते 'स्वामी' नाहि मानि" ॥ ११४ ॥

सेइ व्याख्या करेन याहाँ येइ पड़े आनि' ।
एक-वाक्यता नाहि, ताते 'स्वामी' नाहि मानि" ॥ ११४ ॥

सेइ—वे; **व्याख्या करेन**—व्याख्या करते हैं; **याहाँ**—जहाँ पर भी; **येइ**—जो भी; **पड़े**—पढ़ते हैं; **आनि'**—स्वीकार करते हैं; **एक-वाक्यता**—निरन्तरता; **नाहि**—नहीं है; **ताते**—अतः; **स्वामी**—श्रीधर स्वामी को; **नाहि मानि**—मैं स्वीकार नहीं कर सकता।

अनुवाद

"श्रीधर स्वामी जो भी पढ़ते हैं, उसकी व्याख्या परिस्थिति के अनुसार करते हैं। इसलिए उनकी व्याख्या में एकरूपता नहीं है और उन्हें प्रामाणिक नहीं माना जा सकता।"

প্রভু হাসি' কহে,—"স্বামী না মানে যেই জন ।
বেশ্যার ভিতরে তারে করিয়ে গণন" ॥ ११५ ॥

प्रभु हासि' कहे,—"स्वामी ना माने येइ जन ।
वेश्यार भितरे तारे करिये गणन" ॥ ११५ ॥

प्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **हासि'**—हँसकर; **कहे**—कहा; **स्वामी**—पति; **ना माने**—नहीं मानती; **येइ जन**—जो कोई भी; **वेश्यार भितरे**—वेश्याओं के बीच; **तारे**—उसे; **करिये गणन**—मैं गिनता हूँ।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने हँसते हुए उत्तर दिया, "जो व्यक्ति अपने स्वामी (पति) को अधिकारी नहीं मानता उसे मैं वेश्या समझता हूँ।"

এত কহি' মহাপ্রভু মৌন ধরিলা ।
শুনিয়া সবার মনে সন্তোষ হইলা ॥ ११६ ॥

एत कहि' महाप्रभु मौन धरिला ।
शुनिया सबार मने सन्तोष हइला ॥ ११६ ॥

एत कहि'—यह कहकर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **मौन धरिला**—अत्यन्त गम्भीर हो गये; **शुनिया**—सुनकर; **सबार**—सभी भक्तों के; **मने**—मन में; **सन्तोष हइला**—महान् सन्तोष हुआ।

अनुवाद

यह कहकर श्री चैतन्य महाप्रभु अत्यन्त गम्भीर हो गये। वहाँ पर उपस्थित सारे भक्तों को यह कथन सुनकर अतीव सन्तोष हुआ।

জগতের হিত লাগি' গৌর-অবতার ।
অন্তরের অভিমান জানেন তাহার ॥ ११७ ॥

जगतेर हित लागि' गौर-अवतार ।
अन्तरेर अभिमान जानेन ताहार ॥ ११७ ॥

जगतेर—समस्त जगत् के; **हित लागि'**—लाभ के लिए; **गौर-अवतार**—श्री चैतन्य महाप्रभु का अवतार; **अन्तरेर अभिमान**—आन्तरिक गर्व; **जानेन**—समझ गये; **ताहार**—उनका।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु सारे जगत् के लाभ हेतु अवतार के रूप में प्रकट हुए हैं। इस तरह वे वल्लभ भट्ट के मन को भलीभाँति जान चुके थे।

नाना अवज्ञाने भट्टे शोधेन भगवान् ।
कृष्ण यैछे खण्डिलेन इन्द्रेर अभिमान ॥११८॥

नाना अवज्ञाने भट्टे शोधेन भगवान् ।
कृष्ण य्रैछे खण्डिलेन इन्द्रेर अभिमान ॥ ११८ ॥

नाना—अनेक प्रकार के; **अवज्ञाने**—असम्मान द्वारा; **भट्टे**—वल्लभ भट्ट का; **शोधेन**—शोधन करते हैं; **भगवान्**—परम भगवान्; **कृष्ण**—कृष्ण; **य्रैछे**—जैसे; **खण्डिलेन**—काटते हैं; **इन्द्रेर अभिमान**—इन्द्र का अभिमान।

अनुवाद

पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु ने अनेक संकेतों तथा खण्डनों के द्वारा वल्लभ भट्ट को उसी तरह सुधारा, जिस तरह कृष्ण ने इन्द्र के मिथ्या दर्प को खण्डित किया था।

तात्पर्य

इन्द्र को अपने पद का बहुत गर्व था। अतएव जब वृन्दावनवासियों ने इन्द्र यज्ञ सम्पन्न न करके कृष्ण के आदेशानुसार गोवर्धन यज्ञ करने का निश्चय किया, तो इन्द्र ने अपने मिथ्या गर्व के कारण वृन्दावनवासियों को दण्डित करना चाहा। उसने अपने आपको अत्यन्त शक्तिशाली मानकर वृन्दावन पर मूसलाधार वर्षा करनी प्रारम्भ कर दी, किन्तु भगवान् कृष्ण ने तुरन्त उसके दर्प को चूर करने के लिए ही वृन्दावनवासियों की रक्षा हेतु गोवर्धन पर्वत को छाते की तरह उठा लिया। इस तरह कृष्ण ने अपनी सर्वशक्तिमत्ता के समक्ष इन्द्र की शक्ति को नितान्त तुच्छ सिद्ध कर दिखाया।

अज्ञ जीव निज-'हिते' 'अहित' करि' माने ।
गर्व चूर्ण हैले, पाछे उघाड़े नयने ॥११९॥

अज्ञ जीव निज-'हिते' 'अहित' करि' माने ।
गर्व चूर्ण हैले, पाछे उघाड़े नयने ॥ ११९ ॥

अज्ञ जीव—अज्ञानी जीव; **निज-हिते**—अपने हित को; **अहित करि' माने**—हानि मानता है; **गर्व चूर्ण हैले**—जब गर्व चला जाता है; **पाछे**—उसके बाद; **उघाड़े नयने**—आँखे खुलती हैं।

अनुवाद

अज्ञानी जीव अपना वास्तविक हित नहीं पहचान पाता। अज्ञानता तथा भौतिक गर्व के कारण वह कभी-कभी हित को अहित मानता है, किन्तु जब उसका गर्व चूर हो जाता है, तो वह अपने वास्तविक हित को देख सकता है।

घरे आसि' रात्र्ये भट्ट चिन्तिते लागिल ।
"पूर्वे प्रयागे मोरे महा-कृपा कैल ॥ १२० ॥

घरे आसि' रात्र्ये भट्ट चिन्तिते लागिल ।
"पूर्वे प्रयागे मोरे महा-कृपा कैल ॥ १२० ॥

घरे आसि'—घर आकर; **रात्र्ये**—रात को; **भट्ट**—वल्लभ भट्ट; **चिन्तिते लागिल**—सोचने लगे; **पूर्वे**—पहले; **प्रयागे**—प्रयाग में; **मोरे**—मुझ पर; **महा-कृपा कैल**—अत्यन्त कृपा की थी।

अनुवाद

उस रात घर लौटकर वल्लभ भट्ट ने सोचा, "इसके पूर्व प्रयाग में श्री चैतन्य मुझ पर अत्यन्त दयालु थे।

स्वगण-सहिते मोर मानिला निमन्त्रण ।
एबे केने प्रभुर मोते फिरि' गेल मन? ॥ १२१ ॥

स्वगण-सहिते मोर मानिला निमन्त्रण ।
एबे केने प्रभुर मोते फिरि' गेल मन? ॥ १२१ ॥

स्व-गण-सहिते—अपने पार्षदों के साथ; **मोर**—मेरा; **मानिला**—स्वीकार किया; **निमन्त्रण**—निमन्त्रण; **एबे**—अब; **केने**—क्यों; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **मोते**—मेरे प्रति; **फिरि' गेल**—बदल गया; **मन**—मन।

अनुवाद

"उन्होंने अपने अन्य भक्तों सहित मेरा निमन्त्रण स्वीकार किया था

और वे मुझ पर अत्यन्त कृपालु थे। यहाँ जगन्नाथपुरी में वे इतना अधिक क्यों बदल गये हैं?

'আমি জিতি',——এই গর্ব-শূন্য হউক ইঁহার চিত ।
ঈশ্বর-স্বভাব,——করেন সবাকার হিত ॥১২২॥

'आमि जिति',——एइ गर्व-शून्य हउक इँहार चित ।
ईश्वर-स्वभाव,——करेन सबाकार हित ॥ १२२ ॥

आमि जिति—मैं विजयी हो जाऊँ; **एइ**—यह; **गर्व**—घमंड; **शून्य**—रहित; **हउक**—हो जाये; **इँहार चित**—इस व्यक्ति का मन; **ईश्वर-स्वभाव**—परम भगवान् के लक्षण; **करेन**—वे करते हैं; **सबाकार**—सभी का; **हित**—भला।

अनुवाद

"अपनी विद्या पर अत्यधिक गर्वित होकर मैं सोच रहा हूँ, 'मुझे विजयी हो जाने दो।' किन्तु श्री चैतन्य महाप्रभु मेरे इस मिथ्या गर्व को भंग करके मुझे शुद्ध बनाना चाह रहे हैं, क्योंकि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का स्वभाव है कि वे हर एक के कल्याण के लिए कार्य करते हैं।

আপনা জানাইতে আমি করি অভিমান ।
সে গর্ব খণ্ডাইতে মোর করেন অপমান ॥১২৩॥

आपना जानाइते आमि करि अभिमान ।
से गर्व खण्डाइते मोर करेन अपमान ॥ १२३ ॥

आपना जानाइते—अपना विज्ञापन करके; **आमि**—मैं; **करि अभिमान**—मिथ्या अभिमान में हूँ; **से गर्व**—वह गर्व; **खण्डाइते**—नष्ट करने के लिए; **मोर करेन अपमान**—उन्होंने मेरा अपमान किया।

अनुवाद

"मैं अपने आपको विद्वान पण्डित घोषित करके मिथ्या ही गर्वित हूँ। इसीलिए श्री चैतन्य महाप्रभु मेरे इस मिथ्या गर्व को चूर करके मुझ पर कृपा करने के लिए मेरा अपमान करते हैं।

আমার 'হিত' করেন,——ইহো আমি মানি 'দুঃখ' ।
কৃষ্ণের উপরে কৈল যেন ইন্দ্র মহা-মূর্খ'' ॥১২৪॥

आमार 'हित' करेन,——इहो आमि मानि 'दुःख' ।
कृष्णेर उपरे कैल ग्रेन इन्द्र महा-मूर्ख" ॥ १२४॥

आमार—मेरा; **हित**—भला; **करेन**—वे कर रहे हैं; **इहो**—यह; **आमि**—मैं; **मानि**—मानता हूँ; **दुःख**—दुःख; **कृष्णेर उपरे**—कृष्ण पर; **कैल**—किया; **ग्रेन**—जैसे; **इन्द्र**—इन्द्र; **महा-मूर्ख**—महामूर्ख ने।

अनुवाद

"वे वास्तव में मेरे हित के लिए ऐसा कर रहे हैं, यद्यपि मैं उनके कार्यों को अपमान मानता हूँ। यह उसी घटना के तुल्य है, जिसमें भगवान् कृष्ण ने गर्वित महामूर्ख इन्द्र को सही रास्ते पर लाने के लिए उसके गर्व को चूर किया था।"

এত চিন্তি' প্রাতে আসি' প্রভুর চরণে ।
দৈন্য করি' স্তুতি করি' লইল শরণে ॥১২৫॥

एत चिन्ति' प्राते आसि' प्रभुर चरणे ।
दैन्य करि' स्तुति करि' लइल शरणे ॥ १२५॥

एत चिन्ति'—यह सोचकर; **प्राते**—प्रातः काल में; **आसि'**—आकर; **प्रभुर चरणे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में; **दैन्य करि'**—विनम्रतापूर्वक; **स्तुति करि'**—अनेक स्तुतियाँ करके; **लइल शरणे**—शरण ली।

अनुवाद

इस तरह सोचकर दूसरे दिन प्रातःकाल वल्लभ भट्ट श्री चैतन्य महाप्रभु के पास पहुँचे और अत्यन्त दीनता के साथ अनेक स्तुतियाँ करके उन्होंने महाप्रभु के चरणकमलों की शरण ग्रहण कर ली।

''আমি অজ্ঞ জীব,——অজ্ঞোচিত কর্ম কৈলুঁ ।
তোমার আগে মূর্খ আমি পাণ্ডিত্য প্রকাশিলুঁ ॥১২৬॥

"आमि अज्ञ जीव,——अज्ञोचित कर्म कैलुँ ।
तोमार आगे मूर्ख आमि पाण्डित्य प्रकाशिलुँ ॥ १२६॥

आमि—मैं; **अज्ञ जीव**—अज्ञानी जीव; **अज्ञ-उचित**—मूर्खतापूर्ण; **कर्म**—कर्म; **कैलुँ**—मैंने किया है; **तोमार आगे**—आपके सामने; **मूर्ख**—मूर्ख; **आमि**—मैंने; **पाण्डित्य प्रकाशिलुँ**—विद्वत्ता प्रदर्शित करने का प्रयास किया है।

अनुवाद

वल्लभ भट्ट ने स्वीकार किया, "मैं महामूर्ख हूँ और निसन्देह आपके समक्ष अपना पाण्डित्य प्रदर्शित करने का प्रयास करके मैंने मूर्ख जैसा आचरण किया है।

तुमि—ईश्वर, निजोचित कृपा ये करिला ।
अपमान करि' सर्व गर्व खण्डाइला ॥ १२७॥

तुमि—ईश्वर, निजोचित कृपा ये करिला ।
अपमान करि' सर्व गर्व खण्डाइला ॥ १२७॥

तुमि—आप; **ईश्वर**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **निज-उचित**—आपकी स्थिति के योग्य; **कृपा**—कृपा; **ये**—वह; **करिला**—आपने की है; **अपमान करि'**—अपमान करके; **सर्व**—समस्त; **गर्व**—घमंड; **खण्डाइला**—आपके चूर कर दिया है।

अनुवाद

"हे प्रभु, आप पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं। आपने मेरा अपमान करके मेरा समस्त मिथ्या गर्व चूर करने के लिए अपने पद के अनुकूल मुझ पर कृपा की है।

आमि—अज्ञ, 'हित'-स्थाने मानि 'अपमाने' ।
इन्द्र येन कृष्णेर निन्दा करिल अज्ञाने ॥ १२८॥

आमि—अज्ञ, 'हित'-स्थाने मानि 'अपमाने' ।
इन्द्र येन कृष्णेर निन्दा करिल अज्ञाने ॥ १२८॥

आमि—मैं; **अज्ञ**—मूर्ख; **हित-स्थाने**—जो मेरे लिए हितकर है; **मानि**—मैं मानता हूँ; **अपमाने**—अपमान; **इन्द्र**—राजा इन्द्र ने; **येन**—जैसे; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के प्रति; **निन्दा**—अपराध; **करिल**—किया था; **अज्ञाने**—अज्ञान के कारण।

अनुवाद

"मैं अज्ञानी मूर्ख हूँ, क्योंकि जो मेरे हित के लिए है, उसे मैं अपमान

मानता हूँ। इस प्रकार मैं राजा इन्द्र के समान हूँ, जिसने अज्ञानवश भगवान् कृष्ण को मात कर देना चाहा था।

তোমার কৃপা-অঞ্জনে এবে গর্ব-আন্ধ্য গেল ।
তুমি এত কৃপা কৈলা,—এবে 'জ্ঞান' হৈল ॥ ১২৯॥
तोमार कृपा-अञ्जने एबे गर्व-आन्ध्य गेल ।
तुमि एत कृपा कैला,—एबे 'ज्ञान' हैल ॥ १२९ ॥

तोमार कृपा-अञ्जने—आपकी कृपा रूपी अंजन द्वारा; **एबे**—अब; **गर्व-आन्ध्य**—मिथ्या अहंकार का अन्धापन; **गेल**—चला गया; **तुमि**—आपने; **एत**—ऐसी; **कृपा**—कृपा; **कैला**—की है; **एबे**—अब; **ज्ञान**—ज्ञान; **हैल**—हुआ है।

अनुवाद

"हे प्रभु, आपने मेरी आँखों में अपनी कृपा का अंजन लगाकर मेरे मिथ्या गर्व के अन्धेपन को दूर कर दिया है। आपने मुझ पर इतनी कृपा की है कि अब मेरा अज्ञान समाप्त हो गया है।

অপরাধ কৈনু, ক্ষম, লইনু শরণ ।
কৃপা করি' মোর মাথে ধরহ চরণ'' ॥ ১৩০॥
अपराध कैनु, क्षम, लइनु शरण ।
कृपा करि' मोर माथे धरह चरण" ॥ १३० ॥

अपराध कैनु—मैंने अपराध किये हैं; **क्षम**—कृपया क्षमा करें; **लइनु शरण**—मैं शरण लेता हूँ; **कृपा करि'**—कृपा करके; **मोर माथे**—मेरे सिर पर; **धरह चरण**—आपके चरणकमल रख दीजिये।

अनुवाद

"हे प्रभु, मैंने अपराध किये हैं। कृपया आप मुझे क्षमा कर दें। मैं आपकी शरण में आया हूँ। कृपया अपने चरणकमलों को मेरे सिर पर रखकर आप मुझ पर कृपालु हों।"

প্রভু কহে—''তুমি 'পণ্ডিত' 'মহা-ভাগবত' ।
দুই-গুণ যাহাঁ, তাহাঁ নাহি গর্ব-পর্বত ॥ ১৩১॥

प्रभु कहे—"तुमि 'पण्डित' 'महा-भागवत' ।
दुइ-गुण ग्राहाँ, ताहाँ नाहि गर्व-पर्वत ॥ १३१ ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **तुमि**—आप; **पण्डित**—अत्यन्त विद्वान; **महा-भागवत**—महान् भक्त; **दुइ-गुण**—दोनों गुण; **ग्राहाँ**—जहाँ; **ताहाँ**—वहाँ; **नाहि**—नहीं हो सकता; **गर्व-पर्वत**—गर्व का पहाड़।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "आप बहुत बड़े पण्डित तथा बहुत बड़े भक्त भी हो। जहाँ भी ऐसे दो गुण होते हैं, वहाँ मिथ्या गर्व का पर्वत नहीं रह सकता।

श्रीधर-स्वामी निन्दि' निज-टीका कर! ।
श्रीधर-स्वामी नाहि मान',—एत 'गर्व' धर! ॥ १३२ ॥
श्रीधर-स्वामी निन्दि' निज-टीका कर! ।
श्रीधर-स्वामी नाहि मान',—एत 'गर्व' धर! ॥ १३२ ॥

श्रीधर-स्वामी—*श्रीमद्भागवत* पर एक महान् भाष्यकार; **निन्दि'**—निन्दा करके; **निज-टीका**—अपनी टीका; **कर**—आपने रची है; **श्रीधर-स्वामी**—श्रीधर स्वामी को; **नाहि मान'**—आप नहीं मानते; **एत**—यही; **गर्व**—घमंड; **धर**—आप रखते हो।

अनुवाद

"तुमने श्रीधर स्वामी की आलोचना करने का दुःस्साहस किया है और उनकी प्रामाणिकता को न स्वीकार करके श्रीमद्भागवत पर अपनी टीका करनी शुरू की है। यही आपका मिथ्या गर्व है।

श्रीधर-स्वामि-प्रसादे 'भागवत' जानि ।
जगदगुरू श्रीधर-स्वामी 'गुरू' करि' मानि ॥ १३३ ॥
श्रीधर-स्वामि-प्रसादे 'भागवत' जानि ।
जगद्गुरु श्रीधर-स्वामी 'गुरु' करि' मानि ॥ १३३ ॥

श्रीधर-स्वामि—श्रीधर स्वामी की; **प्रसादे**—कृपा द्वारा; **भागवत जानि**—हम *श्रीमद्भागवत* को समझ सकते हैं; **जगत्-गुरु**—समस्त विश्व के गुरु; **श्रीधर-स्वामी**—श्रीधर स्वामी; **गुरु करि'**—आध्यात्मिक गुरु के समान; **मानि**—मैं स्वीकार करता हूँ।

अनुवाद

"श्रीधर स्वामी सारे जगत् के गुरु हैं, क्योंकि उनकी कृपा से हम श्रीमद्भागवत को समझ सकते हैं। अतएव मैं उन्हें गुरु के रूप में मानता हूँ।

श्रीधर-उपरे गर्वे ये किछु लिखिबे ।
'अर्थ-व्यस्त' लिखन सेइ, लोके ना मानिबे ॥ १३४॥

श्रीधर-उपरे गर्वे ग्रे किछु लिखिबे ।
'अर्थ-व्यस्त' लिखन सेइ, लोके ना मानिबे ॥ १३४॥

श्रीधर-उपरे—श्रीधर स्वामी से आगे; **गर्वे**—अहंकार वश; **ग्रे किछु लिखिबे**—आप जो कुछ भी लिखते हो; **अर्थ-व्यस्त**—विपरीत अर्थ; **लिखन सेइ**—ऐसा लेखन; **लोके ना मानिबे**—कोई भी परवाह नहीं करेगा।

अनुवाद

"श्रीधर स्वामी से श्रेष्ठ बनने का प्रयास करते हुए मिथ्या गर्व से आप चाहे जो भी लिखो, उसका विपरीत तात्पर्य होगा। इसलिए उसकी ओर कोई भी ध्यान नहीं देगा।

तात्पर्य

परम्परा प्रणाली के अनुसार *श्रीमद्भागवत* की अनेक टीकाएँ हैं, किन्तु श्रीधर स्वामी की टीका सर्वप्रथम है। अन्य सभी आचार्यों की टीकाएँ उनकी ही टीका का अनुगमन करती हैं। परम्परा प्रणाली पूर्ववर्ती आचार्यों की टीकाओं से विपथ होने की अनुमति किसी को नहीं देती। पूर्ववर्ती आचार्यों पर निर्भर रहकर, सुन्दर टीकाएँ लिखी जा सकती हैं। किन्तु पूर्ववर्ती आचार्यों का उल्लंघन नहीं किया जा सकता। मिथ्या गर्व के कारण यदि कोई यह सोचता है कि वह पूर्ववर्ती आचार्यों से अच्छा लिख सकता है, तो उसकी टीका गलत हो जायेगी। आज यह फैशन बन गया है कि हर कोई मनमाने ढंग से लिखने लगा है, किन्तु ऐसी टीकाएँ गम्भीर भक्तों द्वारा स्वीकार नहीं की जातीं। मिथ्या गर्व के कारण, हर विद्वान और दार्शनिक अपने ढंग से शास्त्रों की, विशेषतया *भगवद्गीता* तथा *श्रीमद्भागवत* की व्याख्या करके अपने पाण्डित्य को प्रकट करना चाहता है।

अपने ढंग से टीका करने की इस पद्धति की श्री चैतन्य महाप्रभु ने पूरी तरह से भर्त्सना की है। इसीलिए वे कहते हैं *अर्थव्यस्त लिखन सेइ।* अपनी खुद की दार्शनिक विचारधारा के अनुसार लिखी गई टीकाएँ मान्य नहीं होतीं। प्रामाणिक शास्त्रों पर इस तरह की टीकाओं की कोई प्रशंसा नहीं करेगा।

श्रीधरेर अनुगत ये करे लिखन ।
सब लोक मान्य करि' करिबे ग्रहण ॥ १३५ ॥

श्रीधरेर अनुगत ग्रे करे लिखन ।
सब लोक मान्य करि' करिबे ग्रहण ॥ १३५ ॥

श्रीधरेर—श्रीधर स्वामी के; **अनुगत**—चरणचिह्नों का अनुसरण करके; **ग्रे**—जो कोई भी; **करे लिखन**—लिखता है; **सब लोक**—सभी; **मान्य करि'**—सम्मानपूर्वक; **करिबे ग्रहण**—स्वीकार करेंगे।

अनुवाद

"जो व्यक्ति श्रीधर स्वामी के चरणचिह्नों का अनुगमन करते हुए श्रीमद्भागवत पर टीका लिखता है, उसका सभी लोग सम्मान करेंगे और वह सबके द्वारा मान्य होगी।

श्रीधरानुगत कर भागवत-व्याख्यान ।
अभिमान छाड़ि' भज कृष्ण भगवान् ॥ १३६ ॥

श्रीधरानुगत कर भागवत-व्याख्यान ।
अभिमान छाड़ि' भज कृष्ण भगवान् ॥ १३६ ॥

श्रीधर-अनुगत—श्रीधर स्वामी के चरणचिह्नों का अनुसरण करते हुए; **कर**—करो; **भागवत-व्याख्यान**—श्रीमद्भागवतम् पर व्याख्या; **अभिमान छाड़ि'**—मिथ्या अभिमान छोड़कर; **भज**—सेवा करो; **कृष्ण भगवान्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण की।

अनुवाद

"आप श्रीधर स्वामी के चरणचिह्नों का अनुगमन करते हुए श्रीमद्भागवत की अपनी व्याख्या प्रस्तुत करो। आप अपना मिथ्या गर्व त्याग दो और पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण की पूजा करो।

অপরাধ ছাড়ি' কর কৃষ্ণ-সঙ্কীর্তন ।
অচিরাত্পাবে তবে কৃষ্ণের চরণ'' ॥ ১৩৭॥

अपराध छाड़ि' कर कृष्ण-सङ्कीर्तन ।
अचिरात् पाबे तबे कृष्णेर चरण" ॥ १३७॥

अपराध छाड़ि'—अपराध छोड़कर; **कर कृष्ण-सङ्कीर्तन**—कृष्ण नाम का कीर्तन करो; **अचिरात्**—अति शीघ्र; **पाबे**—आप प्राप्त करोगे; **तबे**—तब; **कृष्णेर चरण**—भगवान् कृष्ण के चरणकमलों की शरण।

अनुवाद

"अपने अपराधों को छोड़कर हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करो। तब आप शीघ्र ही कृष्ण के चरणकमलों की शरण पा सकोगे।"

ভট্ট কহে,—''যদি মোরে হইলা প্রসন্ন ।
এক-দিন পুনঃ মোর মান' নিমন্ত্রণ'' ॥ ১৩৮॥

भट्ट कहे,—"यदि मोरे हइला प्रसन्न ।
एक-दिन पुनः मोर मान' निमन्त्रण" ॥ १३८॥

भट्ट कहे—वल्लभ भट्ट ने कहा; **यदि**—यदि; **मोरे**—मेरे प्रति; **हइला प्रसन्न**—आप प्रसन्न हैं; **एक-दिन**—एक दिन; **पुनः**—फिर; **मोर**—मेरा; **मान'**—स्वीकार कीजिये; **निमन्त्रण**—निमन्त्रण।

अनुवाद

वल्लभ भट्ट आचार्य ने श्री चैतन्य महाप्रभु से प्रार्थना की, "यदि आप मुझ पर सचमुच प्रसन्न हैं, तो एक बार फिर मेरा निमन्त्रण स्वीकार कर लें।"

প্রভু অবতীর্ণ হৈলা জগত্তারিতে ।
মানিলেন নিমন্ত্রণ, তারে সুখ দিতে ॥ ১৩৯॥

प्रभु अवतीर्ण हैला जगत्तारिते ।
मानिलेन निमन्त्रण, तारे सुख दिते ॥ १३९॥

प्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **अवतीर्ण हैला**—अवतार हुआ है; **जगत्**—विश्व के;

तारिते—उद्धार के लिए; **मानिलेन**—उन्होंने स्वीकार किया; **निमन्त्रण**—बुलावा; **तारे**—उन्हें; **सुख**—प्रसन्नता; **दिते**—प्रदान करने के लिए।

अनुवाद

समस्त ब्रह्माण्ड का उद्धार करने के लिए अवतार लेने वाले श्री चैतन्य महाप्रभु ने वल्लभ भट्ट को सुख प्रदान करने हेतु उनका निमन्त्रण स्वीकार कर लिया।

जगतेर 'हित' हउक——एइ प्रभुर मन ।
दण्ड करि' करे तार हृदय शोधन ॥ १४० ॥

जगतेर 'हित' हउक——एइ प्रभुर मन ।
दण्ड करि' करे तार हृदय शोधन ॥ १४० ॥

जगतेर—समस्त विश्व का; **हित**—भला; **हउक**—हो; **एइ**—यह; **प्रभुर मन**—श्री चैतन्य महाप्रभु की इच्छा; **दण्ड करि'**—दण्ड देकर; **करे**—करते हैं; **तार**—उसका; **हृदय**—हृदय; **शोधन**—शुद्धीकरण।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु इस भौतिक जगत् में हर एक को सुखी देखने के लिए सदैव उत्सुक रहते हैं। इसलिए कभी-कभी वे किसी-किसी को दण्ड देते हैं, जिससे वह अपने हृदय को शुद्ध कर सके।

स्वगण-सहित प्रभुर निमन्त्रण कैला ।
महाप्रभु तारे तबे प्रसन्न हइला ॥ १४१ ॥

स्वगण-सहित प्रभुर निमन्त्रण कैला ।
महाप्रभु तारे तबे प्रसन्न हइला ॥ १४१ ॥

स्व-गण-सहित—उनके संगियों के साथ; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **निमन्त्रण**—निमन्त्रण; **कैला**—किया; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **तारे**—उस पर; **तबे**—तब; **प्रसन्न हइला**—अत्यन्त प्रसन्न हुए।

अनुवाद

जब वल्लभ भट्ट ने श्री चैतन्य महाप्रभु तथा उनके संगियों को निमन्त्रित किया, तो महाप्रभु उनसे अत्यधिक प्रसन्न थे।

জগদানন্দ-পণ্ডিতের শুদ্ধ গাঢ় ভাব ।
সত্যভামা-প্রায় প্রেম 'বাম্য-স্বভাব' ॥ ১৪২ ॥

জগদানন্দ-পণ্ডিতের শুদ্ধ গাঢ় ভাব ।
সত্যভামা-প্রায় প্রেম 'বাম্য-স্বভাব' ॥ ১৪২ ॥

জগদানন্দ-পণ্ডিতের—জগদানন্দ पण्डित का; **শুদ্ধ**—शुद्ध; **গাঢ়**—गहरा; **ভাব**—प्रेमभाव; **সত্যভামা-প্রায়**—सत्यभामा के समान; **প্রেম**—उनका भगवान् के प्रति प्रेम; **বাম্য-স্বভাব**—झगड़े के स्वभाव का।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के लिए जगदानन्द पण्डित का शुद्ध प्रमभाव अत्यन्त प्रगाढ़ था। इसकी तुलना सत्यभामा के प्रेम से की जा सकती है, जो कृष्ण से सदैव झगड़ती रहती थीं।

বার-বার প্রণয় কলহ করে প্রভু-সনে ।
অন্যোঽন্যে খটমটি চলে দুই-জনে ॥ ১৪৩ ॥

বার-বার প্রণয় কলহ করে প্রভু-সনে ।
অন্যোঽন্যে খট্‌মটি চলে দুই-জনে ॥ ১৪৩ ॥

বার-বার—बारम्बार; **প্রণয়**—प्रेममय; **কলহ**—झगड़ा; **করে**—करते; **প্রভু-সনে**—श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ; **অন্যোঽন্যে**—आपस में; **খট্‌মটি**—अनबन; **চলে**—चलती है; **দুই-জনে**—दोनों के बीच।

अनुवाद

जगदानन्द पण्डित में महाप्रभु से प्रेमपूर्ण झगड़ा करने की आदत थी। उन दोनों के बीच सदैव कुछ न कुछ खटपट चलती रहती थी।

গদাধর-পণ্ডিতের শুদ্ধ গাঢ় ভাব ।
রুক্মিণী-দেবীর যৈছে 'দক্ষিণ-স্বভাব' ॥ ১৪৪ ॥

গদাধর-পণ্ডিতের শুদ্ধ গাঢ় ভাব ।
রুক্মিণী-দেবীর য়ৈছে 'দক্ষিণ-স্বভাব' ॥ ১৪৪ ॥

গদাধর-পণ্ডিতের—गदाधर पण्डित का; **শুদ্ধ**—शुद्ध; **গাঢ়**—गहरा; **ভাব**—प्रेमभाव; **রুক্মিণী-দেবীর**—रूक्मिणी देवी; **য়ৈছে**—जैसे; **দক্ষিণ-স্বভাব**—समर्पित स्वभाव।

अनुवाद

गदाधर पण्डित का भी श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रति शुद्ध प्रेम अत्यन्त प्रगाढ़ था। यह प्रेम रुक्मिणी देवी जैसा था, जो सदैव कृष्ण के प्रति विनीत बनी रहती थीं।

তাঁর প্রণয়-রোষ দেখিতে প্রভুর ইচ্ছা হয় ।
ঐশ্বর্য-জ্ঞানে তাঁর রোষ নাহি উপজয় ॥ ১৪৫ ॥

তাঁর প্রণয়-রোষ দেখিতে প্রভুর ইচ্ছা হয় ।
ঐশ্বর্য্য-জ্ঞানে তাঁর রোষ নাহি উপজয় ॥ ১৪৫ ॥

তাঁর—उनका; **प्रणय-रोष**—स्नेहपूर्ण क्रोध; **देखिते**—देखने की; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **इच्छा हय**—इच्छा होती; **ऐश्वर्य्य-ज्ञाने**—ऐश्वर्य ज्ञान के कारण; **ताँर**—उनका; **रोष**—क्रोध; **नाहि**—नहीं; **उपजय**—जागता।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु कभी-कभी गदाधर पण्डित का स्नेहिल क्रोध (मान) देखना चाहते थे, किन्तु महाप्रभु के ऐश्वर्य का ज्ञान होने के कारण वे कभी रुष्ट नहीं होते थे।

तात्पर्य

द्वारका में रुक्मिणी से परिहास करते समय कृष्ण ने उन्हें सलाह दी थी कि वे अपने लिए दूसरा पति चुन लें, क्योंकि वे उनके लिए अपने आपको अनुपयुक्त समझते थे। किन्तु रुक्मिणी उनके परिहास को नहीं समझ पाईं, अतएव वे उनके विछोह के भय से तुरन्त पृथ्वी पर अचेत होकर गिर पड़ीं। श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं में जगदानन्द पण्डित सदैव सत्यभामा की तरह महाप्रभु से प्रतिकूल रहते, जबकि गदाधर पण्डित महाप्रभु के ऐश्वर्य से सदैव प्रभावित रहते, अतएव वे हर परिस्थिति में महाप्रभु के प्रति विनीत बने रहते।

এই লক্ষ্য পাঞা প্রভু কৈলা রোষাভাস ।
শুনি' পণ্ডিতের চিত্তে উপজিল ত্রাস ॥ ১৪৬ ॥

এই লক্ষ্য পাঞা প্রভু কৈলা রোষাভাস ।
শুনি' পণ্ডিতের চিত্তে উপজিল ত্রাস ॥ ১৪৬ ॥

एइ—यह; **लक्ष्य**—उद्देश्य; **पाञा**—लेकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **कैला रोष-आभास**—क्रोध का दिखावा करते हैं; **शुनि'**—सुनकर; **पण्डितेर**—गदाधर पण्डित के; **चित्ते**—हृदय में; **उपजिल**—उत्पन्न हो गया; **त्रास**—भय।

अनुवाद

इसी कारण से श्री चैतन्य महाप्रभु कभी-कभी ऊपरी रोष प्रकट करते थे। इस रोष को सुनकर गदाधर पण्डित के हृदय में महान् भय उत्पन्न हो जाता।

पूर्वे येन कृष्ण यदि परिहास कैल ।
शुनि' रुक्मिणीर मने त्रास उपजिल ॥ १४७॥

पूर्वे येन कृष्ण यदि परिहास कैल ।
शुनि' रुक्मिणीर मने त्रास उपजिल ॥ १४७॥

पूर्वे—पहले; **येन**—जैसे; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **यदि**—जब; **परिहास कैल**—मजाक करते हैं; **शुनि'**—सुनकर; **रुक्मिणीर मने**—रुक्मिणी देवी के मन में; **त्रास**—भय; **उपजिल**—उत्पन्न होता।

अनुवाद

पहले, कृष्ण लीला में जब भगवान् कृष्ण ने रुक्मिणी देवी से परिहास किया था, तब उन्होंने उनके शब्दों को गम्भीरता से लिया, जिससे उनके मन में भय उत्पन्न हो गया।

वल्लभ-भट्टेर हय वात्सल्य-उपासन ।
बाल-गोपाल-मन्त्रे तेँहो करेन सेवन ॥ १४८॥

वल्लभ-भट्टेर हय वात्सल्य-उपासन ।
बाल-गोपाल-मन्त्रे तेंहो करेन सेवन ॥ १४८॥

वल्लभ-भट्टेर—वल्लभ भट्ट की; **हय**—है; **वात्सल्य-उपासन**—वात्सल्य भाव में उपासना; **बाल-गोपाल-मन्त्रे**—बालगोपाल मन्त्र से; **तेंहो**—वे; **करेन**—करते हैं; **सेवन**—उपासना।

अनुवाद

वल्लभ भट्ट भगवान् कृष्ण की बाल रूप की पूजा किया करते थे।

इसलिए उन्हें बालगोपाल मन्त्र की दीक्षा मिली थी और वे इसी रूप में भगवान् की पूजा करते थे।

পণ্ডিতের সনে তার মন ফিরি' গেল ।
কিশোর-গোপাল-উপাসনায় মন দিল ॥ ১৪৯॥

পণ্ডিতের সনে তার মন ফিরি' গেল ।
কিশোর-গোপাল-উপাসনায় মন দিল ॥ ১৪৯॥

पण्डितेर सने—गदाधर पण्डित के संग में; **तार**—उनका; **मन**—मन; **फिरि' गेल**—बदल गया; **किशोर-गोपाल**—किशोर अवस्था के कृष्ण की; **उपासनाय**—उपासना का; **मन दिल**—मन बना लिया।

अनुवाद

गदाधर पण्डित की संगति से उनका मन बदल गया और उन्होंने किशोर गोपाल की पूजा में अपने मन को समर्पित कर दिया।

পণ্ডিতের ঠাঞি চাহে মন্ত্রাদি শিখিতে ।
পণ্ডিত কহে,—"এই কর্ম নহে আমা হৈতে ॥ ১৫০॥

পণ্ডিতের ঠাঞি চাহে মন্ত্রাদি শিখিতে ।
পণ্ডিত কহে,—"এই কর্ম নহে আমা হৈতে ॥ ১৫০॥

पण्डितेर ठाञि—गदाधर पण्डित से; **चाहे**—चाहे; **मन्त्र-आदि शिखिते**—दीक्षा लेना; **पण्डित कहे**—गदाधर पण्डित ने कहा; **एइ कर्म**—यह कार्य; **नहे आमा हैते**—मेरे लिए सम्भव नहीं है।

अनुवाद

वल्लभ भट्ट गदाधर पण्डित से दीक्षा लेना चाहते थे, किन्तु गदाधर पण्डित ने यह कहकर मना कर दिया, "मेरे लिए गुरु के रूप में कार्य करना सम्भव नहीं है।

আমি—পরতন্ত্র, আমার প্রভু—গৌরচন্দ্র ।
তাঁর আজ্ঞা বিনা আমি না হই 'স্বতন্ত্র' ॥ ১৫১॥

आमि—परतन्त्र, आमार प्रभु—गौरचन्द्र ।
ताँर आज्ञा विना आमि ना हइ 'स्वतन्त्र' ॥ १५१ ॥

आमि—मैं; **परतन्त्र**—अधीन हूँ; **आमार प्रभु**—मेरे प्रभु; **गौरचन्द्र**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु; **ताँर**—उनके; **आज्ञा**—आदेश; **विना**—बिना; **आमि**—मैं; **ना**—नहीं; **हइ**—हूँ; **स्वतन्त्र**—स्वतन्त्र।

अनुवाद

"मैं पूरी तरह से परतन्त्र हूँ। मेरे प्रभु तो गौरचन्द्र श्री चैतन्य महाप्रभु हैं। मैं उनके आदेश के बिना स्वतन्त्र रूप से कुछ भी नहीं कर सकता।

तुमि ये आमार ठाञि कर आगमन ।
ताहातेई प्रभु मोरे देन ओलाहन'' ॥ १५२ ॥

तुमि ग्रे आमार ठाञि कर आगमन ।
ताहातेइ प्रभु मोरे देन ओलाहन" ॥ १५२ ॥

तुमि—आप; **ग्रे**—जो; **आमार ठाञि**—मेरे पास; **कर आगमन**—आते हो; **ताहातेइ**—उस कारण; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **मोरे**—मुझे; **देन**—देते हैं; **ओलाहन**—शब्दों से दण्ड।

अनुवाद

"हे वल्लभ भट्ट, मेरे यहाँ आपका आना श्री चैतन्य महाप्रभु को पसन्द नहीं है। इसलिए कभी-कभी वे मुझे दण्डित करने के लिए बोलते रहते हैं।"

एই-মত ভট্টের কথেক দিন গেল ।
শেষে যদি প্রভু তারে সুপ্রসন্ন হৈল ॥ ১৫৩ ॥
নিমন্ত্রণের দিনে পণ্ডিতে বোলাইলা ।
স্বরূপ, জগদানন্দ, গোবিন্দে পাঠাইলা ॥ ১৫৪ ॥
এइ-मत भट्टेर कथेक दिन गेल ।
शेषे ग्रदि प्रभु तारे सुप्रसन्न हैल ॥ १५३ ॥
निमन्त्रणेर दिने पण्डिते बोलाइला ।
स्वरूप, जगदानन्द, गोविन्दे पाठाइला ॥ १५४ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **भट्टेर**—वल्लभ भट्ट के; **कथेक दिन**—कुछ दिन; **गेल**—बीत

गये; **शेषे**—अन्त में; **यदि**—जब; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **तारे**—उन पर; **सु-प्रसन्न हैल**—प्रसन्न हो गये; **निमन्त्रणेर दिने**—निमन्त्रण के दिन; **पण्डिते बोलाइला**—गदाधर पण्डित को उन्होंने बुलाया; **स्वरूप**—स्वरूप दामोदर को; **जगदानन्द**—जगदानन्द पण्डित को; **गोविन्दे**—गोविन्द को; **पाठाइला**—उन्होंने भेजा।

अनुवाद

इस तरह कुछ दिन बीत गये और जब अन्त में श्री चैतन्य महाप्रभु वल्लभ भट्ट पर प्रसन्न हुए, तो उन्होंने उनका निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। तब महाप्रभु ने स्वरूप दामोदर, जगदानन्द पण्डित तथा गोविन्द को गदाधर पण्डित को बुलाने के लिए भेजा।

পথে পণ্ডিতেরে স্বরূপ কহেন বচন ।
''পরীক্ষিতে প্রভু তোমারে কৈলা উপেক্ষণ ॥ ১৫৫॥

पथे पण्डितेरे स्वरूप कहेन वचन ।
"परीक्षिते प्रभु तोमारे कैला उपेक्षण ॥ १५५ ॥

पथे—मार्ग में; **पण्डितेरे**—गदाधर पण्डित से; **स्वरूप**—स्वरूप दामोदर ने; **कहेन वचन**—कुछ वचन कहे; **परीक्षिते**—परीक्षा लेने के लिए; **प्रभु**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **तोमारे**—तुम्हारी; **कैला उपेक्षण**—उपेक्षा की।

अनुवाद

रास्ते में स्वरूप दामोदर ने गदाधर पण्डित से कहा, "श्री चैतन्य महाप्रभु तुम्हारी परीक्षा लेना चाहते थे। इसीलिए उन्होंने तुम्हारी उपेक्षा की है।

তুমি কেনে আসি' তাঁরে না দিলা ওলাহন? ।
ভীত-প্রায় হঞা কাঁহে করিলা সহন?'' ॥১৫৬॥

तुमि केने आसि' ताँरे ना दिला ओलाहन? ।
भीत-प्राय हञा काँहे करिला सहन?" ॥ १५६ ॥

तुमि—तुमने; **केने**—क्यों; **आसि'**—आकर; **ताँरे**—उन्हें; **ना दिला**—नहीं दिया; **ओलाहन**—उलाहना; **भीत-प्राय**—भयभीत; **हञा**—होकर; **काँहे**—क्यों; **करिला सहन**—तुमने सहन किया।

अनुवाद

"तुमने पलटकर उनकी उलाहना क्यों नहीं की? तुमने डरकर उनकी आलोचना क्यों सह ली?"

पण्डित कहेन,——प्रभु स्वतन्त्र सर्वज्ञ-शिरोमणि ।
ताँर सने 'हठ' करि,——भाल नाहि मानि ॥ १५७॥

पण्डित कहेन,——प्रभु स्वतन्त्र सर्वज्ञ-शिरोमणि ।
ताँर सने 'हठ' करि,——भाल नाहि मानि ॥ १५७॥

पण्डित कहेन—गदाधर पण्डित ने कहा; **प्रभु**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु; **स्वतन्त्र**—स्वतन्त्र; **सर्वज्ञ-शिरोमणि**—सर्वश्रेष्ठ सर्वज्ञ हैं; **ताँर सने**—उनके साथ; **हठ करि**—यदि मैं समान स्तर पर बात करता हूँ; **भाल**—अच्छा; **नाहि मानि**—मैं नहीं मानता।

अनुवाद

गदाधर पण्डित ने कहा, "भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु पूर्णतया स्वतन्त्र हैं। वे सर्वोच्च सर्वज्ञ पुरुष हैं। मेरे लिए शोभा नहीं देता कि मैं उनके बराबर बनकर उनसे बात करता।

येइ कहे, सेइ सहि निज-शिरे धरि' ।
आपने करिबेन कृपा गुण-दोष विचारि''' ॥ १५८॥

येइ कहे, सेइ सहि निज-शिरे धरि' ।
आपने करिबेन कृपा गुण-दोष विचारि'" ॥ १५८॥

येइ कहे—वे जो भी कहते हैं; **सेइ सहि**—मैं सहन करता हूँ; **निज-शिरे**—मेरे सिर पर; **धरि'**—धारण कर; **आपने**—स्वयं; **करिबेन कृपा**—वे कृपा करेंगे; **गुण-दोष**—गुण और दोष; **विचारि'**—विचार करके।

अनुवाद

"वे जो भी कहते हैं, उसे मैं शिरोधार्य करके सहन कर सकता हूँ। वे मेरे गुण तथा दोषों पर विचार करके स्वयं ही मुझ पर कृपालु होंगे।"

एत बलि' पण्डित प्रभुर स्थाने आइला ।
रोदन करिया प्रभुर चरणे पड़िला ॥ १५९॥

एत बलि' पण्डित प्रभुर स्थाने आइला ।
रोदन करिया प्रभुर चरणे पड़िला ॥ १५९ ॥

एत बलि'—यह कहकर; **पण्डित**—गदाधर पण्डित; **प्रभुर स्थाने**—श्री चैतन्य महाप्रभु के निवासस्थान पर; **आइला**—आ गये; **रोदन करिया**—रोकर; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **चरणे**—चरणकमलों में; **पड़िला**—गिर गये।

अनुवाद

यह कहकर गदाधर पण्डित श्री चैतन्य महाप्रभु के पास गये और रोते हुए उनके चरणकमलों पर गिर पड़े।

ঈষৎ হাসিয়া প্রভু কৈলা আলিঙ্গন ।
সবারে শুনাঞা কহেন মধুর বচন ॥ ১৬০ ॥

ईषत् हासिया प्रभु कैला आलिङ्गन ।
सबारे शुनाञा कहेन मधुर वचन ॥ १६० ॥

ईषत् हासिया—मन्द मुस्कुराकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **कैला आलिङ्गन**—आलिंगन किया; **सबारे**—सभी को; **शुनाञा**—सुनाते हुए; **कहेन**—कहने लगे; **मधुर वचन**—मधुर वचन।

अनुवाद

कुछ-कुछ हँसते हुए महाप्रभु ने उनका आलिंगन किया और उनसे मधुर वचन कहे, जिससे अन्य लोग भी सुन सकें।

"আমি চালাইলুঁ তোমা, তুমি না চলিলা ।
ক্রোধে কিছু না কহিলা, সকল সহিলা ॥ ১৬১ ॥

"आमि चालाइलुँ तोमा, तुमि ना चलिला ।
क्रोधे किछु ना कहिला, सकल सहिला ॥ १६१ ॥

आमि—मैंने; **चालाइलुँ**—विचलित करने का प्रयास किया; **तोमा**—तुम्हें; **तुमि**—तुम; **ना चलिला**—विचलित नहीं हुए; **क्रोधे**—क्रोध में; **किछु**—कुछ; **ना कहिला**—तुमने नहीं कहा; **सकल**—सब कुछ; **सहिला**—तुमने सहन किया।

अनुवाद

महाप्रभु ने कहा, "मैं तुम्हें उत्तेजित करना चाहता था, किन्तु तुम

उत्तेजित नहीं हुए। निस्सन्देह, क्रोध में तुमने कुछ नहीं कहा; प्रत्युत तुमने सब सह लिया।

আমার ভঙ্গীতে তোমার মন না চলিলা ।
সুদৃঢ় সরল-ভাবে আমারে কিনিলা'' ॥ ১৬২॥

आमार भङ्गीते तोमार मन ना चलिला ।
सुदृढ़ सरल-भावे आमारे किनिला" ॥ १६२॥

आमार भङ्गीते—मेरी युक्ति द्वारा; **तोमार मन**—तुम्हारा मन; **ना चलिला**—विचलित नहीं हुआ; **सुदृढ़**—दृढ़; **सरल-भावे**—सरलता द्वारा; **आमारे**—मुझे; **किनिला**—तुमने खरीद लिया।

अनुवाद

"तुम्हारा मन मेरी युक्तियों से विचलित नहीं हुआ। प्रत्युत तुम अपनी सरलता में दृढ़ बने रहे। इस तरह तुमने मुझे खरीद लिया है।"

পণ্ডিতের ভাব-মুদ্রা কহন না যায় ।
'গদাধর-প্রাণ-নাথ' নাম হৈল যায় ॥ ১৬৩॥

पण्डितेर भाव-मुद्रा कहन ना याय ।
'गदाधर-प्राण-नाथ' नाम हैल याय ॥ १६३॥

पण्डितेर—गदाधर पण्डित का; **भाव-मुद्रा**—चरित्र और प्रेमभाव; **कहन ना याय**—वर्णन नहीं किया जा सकता; **गदाधर-प्राण-नाथ**—गदाधर के प्राणेश्वर; **नाम**—नाम; **हैल**—हो; **याय**—गया।

अनुवाद

कोई भी व्यक्ति गदाधर पण्डित की भाव-भंगिमाओं तथा प्रेम का वर्णन नहीं कर सकता। इसलिए श्री चैतन्य महाप्रभु का दूसरा नाम 'गदाधर प्राणनाथ' अर्थात् 'गदाधर पण्डित के प्राण' है।

পণ্ডিতে প্রভুর প্রসাদ কহন না যায় ।
'গদাইর গৌরাঙ্গ' বলি' যাঁরে লোকে গায় ॥ ১৬৪॥

पण्डिते प्रभुर प्रसाद कहन ना य़ाय ।
'गदाइर गौराङ्ग' बलि' य़ाँरे लोके गाय ॥ १६४॥

पण्डिते—गदाधर पण्डित पर; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **प्रसाद**—कृपा; **कहन ना य़ाय**—कोई वर्णन नहीं कर सकता; **गदाइर गौराङ्ग**—गदाधर पण्डित के गौरांग; **बलि'**—कहकर; **य़ाँरे**—जिन्हें; **लोके गाय**—लोग बुलाते हैं।

अनुवाद

कोई कह नहीं सकता कि महाप्रभु गदाधर पण्डित पर कितने कृपालु हैं, किन्तु लोग महाप्रभु को गदाइर गौरांग अर्थात् "गदाधर पण्डित के गौरांग महाप्रभु" के रूप में जानते हैं।

চৈতন্য-প্রভুর লীলা কে বুঝিতে পারে? ।
এক-লীলায় বহে গঙ্গার শত শত ধারে ॥ ১৬৫॥

चैतन्य-प्रभुर लीला के बुझिते पारे? ।
एक-लीलाय वहे गङ्गार शत शत धारे ॥ १६५॥

चैतन्य-प्रभुर लीला—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाएँ; **के**—कौन; **बुझिते पारे**—समझ सकता है; **एक-लीलाय**—एक लीला में; **वहे**—बहती है; **गङ्गार**—गंगा की; **शत शत धारे**—सौ-सौ धाराएँ।

अनुवाद

कोई भी श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं को समझ नहीं सकता। वे गंगा के समान हैं, क्योंकि उनकी एक लीला से ही सैकड़ों हजारों शाखाएँ बहती हैं।

পণ্ডিতের সৌজন্য, ব্রহ্মণ্যতা-গুণ ।
দৃঢ় প্রেম-মুদ্রা লোকে করিলা খ্যাপন ॥ ১৬৬॥

पण्डितेर सौजन्य, ब्रह्मण्यता-गुण ।
दृढ़ प्रेम-मुद्रा लोके करिला ख्यापन ॥ १६६॥

पण्डितेर सौजन्य—गदाधर पण्डित का सभ्य आचरण; **ब्रह्मण्यता-गुण**—एक ब्राह्मण के गुण; **दृढ़**—दृढ़; **प्रेम-मुद्रा**—प्रेम का लक्षण; **लोके**—लोग; **करिला ख्यापन**—विख्यात हुए।

अनुवाद

गदाधर पण्डित अपने सौम्य आचरण, अपने ब्राह्मण गुणों तथा श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रति अपने दृढ़ प्रेम के लिए सारे जगत् में विख्यात हैं।

अभिमान-पङ्क धुञा भट्टेरे शोधिला ।
सेइ-द्वारा आर सब लोके शिखाइला ॥ १६७ ॥

अभिमान-पङ्क धुञा भट्टेरे शोधिला ।
सेइ-द्वारा आर सब लोके शिखाइला ॥ १६७ ॥

अभिमान-पङ्क—मिथ्या अभिमान का कीचड़; **धुञा**—धोकर; **भट्टेरे शोधिला**—वल्लभ भट्ट का शोधन किया; **सेइ-द्वारा**—उसके द्वारा; **आर सब**—अन्य सभी; **लोके**—लोगों को; **शिखाइला**—शिक्षा दी।

अनुवाद

महाप्रभु ने मिथ्या गर्व के कीचड़ को साफ करके वल्लभ भट्ट को शुद्ध किया। ऐसे कार्यों से महाप्रभु ने अन्यों को भी शिक्षा दी।

अन्तरे 'अनुग्रह,' बाह्ये 'उपेक्षार प्राय' ।
बाह्यार्थ येइ लय, सेइ नाश याय ॥ १६८ ॥

अन्तरे 'अनुग्रह,' बाह्ये 'उपेक्षार प्राय' ।
बाह्यार्थ येइ लय, सेइ नाश याय ॥ १६८ ॥

अन्तरे—हृदय में; **अनुग्रह**—कृपा; **बाह्ये**—बाहर; **उपेक्षार प्राय**—उपेक्षा जैसे; **बाह्य-अर्थ**—बाहरी अर्थ; **येइ**—जो कोई; **लय**—लेता है; **सेइ**—वह; **नाश याय**—नष्ट हो जायेगा।

अनुवाद

वस्तुतः श्री चैतन्य महाप्रभु अपने हृदय के भीतर सदैव कृपालु रहते, किन्तु कभी-कभी वे अपने भक्तों की बाह्य रूप से उपेक्षा करते थे। अतः हमें उनके बाह्य लक्षणों में ही नहीं लगे रहना चाहिए, क्योंकि यदि हम ऐसा करेंगे, तो हमारा विनाश हो जायेगा।

निगूढ़ चैतन्य-लीला बुझिते का'र शक्ति? ।
सेइ बुझे, गौरचन्द्रे याँर दृढ़ भक्ति ॥ १६९ ॥

निगूढ़ चैतन्य-लीला बुझिते का'र शक्ति ? ।
सेइ बुझे, गौरचन्द्रे याँर दृढ़ भक्ति ॥ १६९ ॥

निगूढ़—अति गहरी; **चैतन्य-लीला**—चैतन्य महाप्रभु की लीलाएँ; **बुझिते**—समझने की; **का'र**—किसकी; **शक्ति**—शक्ति; **सेइ बुझे**—वह समझता है; **गौरचन्द्रे**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु में; **याँर**—जिसकी; **दृढ़ भक्ति**—अबाध भक्ति भावना है।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाएँ अगाध हैं। इन्हें कौन समझ सकता है? केवल वही इन लीलाओं को समझ सकता है, जिसकी उनके चरणकमलों में दृढ़ एवं अगाध भक्ति होती है।

दिनान्तरे पण्डित कैल प्रभुर निमन्त्रण ।
प्रभु ताहाँ भिक्षा कैल लञा निज-गण ॥ १७० ॥
दिनान्तरे पण्डित कैल प्रभुर निमन्त्रण ।
प्रभु ताहाँ भिक्षा कैल लञा निज-गण ॥ १७० ॥

दिन-अन्तरे—एक और दिन; **पण्डित**—गदाधर पण्डित ने; **कैल प्रभुर निमन्त्रण**—श्री चैतन्य महाप्रभु को निमंत्रित किया; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **ताहाँ**—वहाँ; **भिक्षा कैल**—प्रसाद ग्रहण किया; **लञा निज-गण**—अपने संगी गणों के साथ।

अनुवाद

अन्य दिन गदाधर पण्डित ने श्री चैतन्य महाप्रभु को भोजन पर बुलाया। महाप्रभु ने अपने संगियों सहित उनके घर पर भोजन किया।

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर टीका करते हैं कि श्री चैतन्य महाप्रभु ने वल्लभ भट्ट के प्रति अत्यन्त दयालु शुभचिन्तक के रूप में उनके पांडित्य के झूठे गर्व को शुद्ध करने के लिए बाह्य रूप से अनेक प्रकार से उपेक्षा की। इसी तरह महाप्रभु ने कुछ दिनों तक गदाधर पण्डित की अवहेलना की, क्योंकि वे वल्लभ भट्ट से संगति कर रहे थे। वस्तुत: वे गदाधर पण्डित से जरा भी अप्रसन्न नहीं थे। चूँकि गदाधर पण्डित श्री चैतन्य महाप्रभु की निजी शक्ति हैं, अतएव महाप्रभु के उनसे कुपित होने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। किन्तु जो व्यक्ति बाह्य वस्तुओं में अत्यधिक लिप्त रहता है, वह श्री चैतन्य महाप्रभु के

इन व्यवहारों का गूढ़ अर्थ नहीं समझ सकता। इसलिए यदि कोई गदाधर पण्डित का अनादर करेगा, तो उसका सर्वनाश हो जायेगा।

তাহাঙি বল্লভ-ভট্ট প্রভুর আজ্ঞা লৈল ।
পণ্ডিত-ঠাঞি পূর্ব-প্রার্থিত সব সিদ্ধি হৈল ॥ ১৭১ ॥

তাহাঙি বল্লভ-ভট্ট প্রভুর আজ্ঞা লৈল ।
পণ্ডিত-ঠাঞি পূর্ব-প্রার্থিত সব সিদ্ধি হৈল ॥ ১৭১ ॥

তাহাঙি—वहाँ; **বল্লভ-ভট্ট**—वल्लभ भट्ट; **প্রভুর আজ্ঞা**—श्री चैतन्य महाप्रभु की आज्ञा; **লৈল**—लेकर; **পণ্ডিত-ঠাঞি**—गदाधर पण्डित से; **পূর্ব-প্রার্থিত**—पहले से प्रार्थित; **সব সিদ্ধি হৈল**—सब कुछ उत्तम प्रकार से प्राप्त हुआ।

अनुवाद

वहीं पर वल्लभ भट्ट ने श्री चैतन्य महाप्रभु से अनुमति ली और गदाधर पण्डित से दीक्षा लेने की उनकी इच्छा पूरी हुई।

এই ত' কহিলুঁ বল্লভ-ভট্টের মিলন ।
যাহার শ্রবণে পায় গৌর-প্রেম-ধন ॥ ১৭২ ॥

এই ত' কহিলুঁ বল্লভ-ভট্টের মিলন ।
যাহার শ্রবণে পায় গৌর-প্রেম-ধন ॥ ১৭২ ॥

এই ত' কহিলুঁ—इस प्रकार मैंने वर्णन किया; **বল্লভ-ভট্টের মিলন**—वल्लभ भट्ट का मिलन; **যাহার শ্রবণে**—जिसे सुनकर; **পায়**—प्राप्त होता है; **গৌর-প্রেম-ধন**—श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रेम का खजाना।

अनुवाद

इस तरह मैंने वल्लभ भट्ट से महाप्रभु की भेंट का वर्णन किया। इस घटना को सुनकर श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रति प्रेम का धन प्राप्त हो सकता है।

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে যার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥ ১৭৩ ॥

श्री-रूप-रघुनाथ-पदे ग्रार आश ।
चैतन्य-चरितामृत कहे कृष्णदास ॥ १७३ ॥

श्री-रूप—श्रील रूप गोस्वामी के; **रघुनाथ**—श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी के; **पदे**—चरणों में; **ग्रार**—जिनकी; **आश**—आशा; **चैतन्य-चरितामृत**—*चैतन्य चरितामृत* नामक ग्रन्थ; **कहे**—वर्णन करते हैं; **कृष्णदास**—श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी।

अनुवाद

श्री रूप तथा श्री रघुनाथ के चरणकमलों की वन्दना करते हुए तथा उनकी कृपा की सदैव कामना करते हुए उनके चरणचिह्नों पर चलकर मैं कृष्णदास श्री चैतन्य चरितामृत का वर्णन कर रहा हूँ।

इस प्रकार श्रीचैतन्य-चरितामृत अन्त्य लीला के अन्तर्गत "श्री चैतन्य महाप्रभु एवं वल्लभ भट्ट की भेंट" शीर्षक सातवें अध्याय का भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुआ।